thearyasamaj.org

ओ३म्

# आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 22 फरवरी 2015 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 22 फरवरी 2015 से 28 फरवरी 2015

फा.शु. 04 ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 145, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

## आर्य समाज अनारकली में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल द्वारका के शिक्षकों और छात्रों द्वारा साप्ताहिक-सत्संग

प्रधानाचार्या श्रीमती मोनिका मेहन के कुशल नेतृत्व में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल द्वारका नई दिल्ली के छात्रों द्वारा आर्य समाज अनारकली नई दिल्ली के साप्ताहिक सत्संग (हवन यज्ञ कार्यक्रम) में बड़े ही उत्साह से भाग लिया गया। निश्चित रूप से यह कार्यक्रम छात्रों एवं अध्यापकों की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण था। यहाँ बहुत कुछ सीखने, जानने और समझने को मिला। सर्व प्रथम सभी छात्रों एवं गणमान्य सदस्यों ने मिलकर हवन यज्ञ किया और आंग्ल–नववर्ष के अवसर पर विश्व कल्याण तथा सभी के मंगलमय जीवन की प्रार्थना की।

**''स्वस्तिपन्थामनुचरेमसूर्याचन्द्रमसाविव। पुनर्ददताघ्नता जानता सङ्गमेमहि।।** आदि मन्त्रों से स्वस्ति वाचन का पाठ किया गया। तत्पश्चात् सुमधुर भजनों के द्वारा छात्रों ने कार्यक्रम में उपस्थित जनसमूह का मन मोह लिया। इस अवसर पर डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल द्वारका के संगीत शिक्षकों ने भी अपनी भजन प्रस्तुति दी।

इस साप्ताहिक सत्संग में डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति के प्रधान एवं आर्यरत्न श्री पूनम सूरी, श्री रामनाथ सहगल, श्री एस.के.शर्मा, ब्रिगेडियर ए.के. अदलखा, श्री अजय सहगल जैसे गणमान्य सदस्य तथा अनेकानेक विद्वान् एवं आचार्य उपस्थित थें।

कार्यक्रम में उपस्थित वक्ताओं द्वारा छात्रों को वैदिक मन्त्रों के उच्चारण के साथ–साथ आर्य समाज के सिद्धान्तों, रीतियों एवं कर्त्तव्यों का परिचय अदियन्त सरल शब्दों में दिया गया।

श्री एस.के. शर्मा के द्वारा छात्रों को आशीर्वाद दिया गया। कार्यक्रम के अन्त में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल द्वारका नई दिल्ली द्वारा शान्तिपाठ एवं प्रसाद वितरण किया गया।

## डी.ए.वी. बूढ़ पुर का उद्घाटन समारोह

बड़े ही हर्षोल्लास के साथ डी.ए.वी. खेड़ा खुर्द की नई शाखा डी.ए.वी. बूढ़ पुर का उद्घाटन डी.ए.वी. मैनेजिंग कमेटी के प्रधान 'आर्य रत्न' श्री पूनम के करकमलों द्वारा किया गया। इस उपलक्ष्य पर डी.ए.वी. परिवार के अन्य गणमान्य अतिथि श्री आर.एस.शर्मा, डॉ. निशा पेशिन (डायरेक्टर डी.ए.वी. सी.एम.सी) तथा विभिन्न डी.ए.वी. विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की उपस्थिति ने इस अवसर में चार चाँद लगा दिए। इस कार्यक्रम का आरंभ आर्यरत्न श्री पूनम सूरी जी के दवारा हवन और वैदिक मंत्रों के उच्चारण के साथ हुआ। श्री पूनम सूरी ने बच्चों को सूर्य के समान विश्व को प्रकाशित करने और अंधकार को दूर कर अच्छाइयों को फैलाने का संदेश दिया। उन्होंने विद्यार्थियों से कहा कि पवित्र मन से किया गया हवन विश्व का कल्याण और सकारात्मक ऊर्जा का प्रसार करता है। सभा में उपस्थित सभी गणमान्य व्यक्तियों ने बच्चों को जीवन में नैतिक मूल्यों सच्चाई, भाईचारा और सहिष्णुता, ईमानदारी आदि को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया।

आर्य रत्न श्री सूरी जी ने विद्यालय का शिलान्यास किया और विद्यालय की पत्रिका 'एथिकल टाइम्स' का विमोचन भी किया। विद्यालय के प्रधान श्री बलदेव जिंदल ने सभा को संबोधित किया तत्पश्चात विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती देविका दत्त ने उपस्थित गणमान्य अतिथियों को शाल और पौधा प्रदान कर सम्मानित किया।

## अनाथ बच्चियों के विवाह में आर्य समाज ने दिया आर्शीवाद

राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित कोटा की श्री करणीनगर विकास समिति में पल–बढ़कर हुई दो लड़कियों के विवाह समारोह में आर्य समाज के जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा, आर्य विद्वान डॉ. के एल. दिवाकर, आर्य समाज विज्ञान नगर के प्रधान जे. एस.दुबे, गायत्री विहार के प्रधान अरविन्द पाण्डेय व राजीव आर्य ने मंच पर वेदमंत्रों के उच्चारण के साथ दूल्हा–दुल्हन को आर्शीवाद दिया।

आर्य समाज जिला सभा द्वारा नवदम्पतियों को कम्बल, शॉल, स्वेटर कार्डीगन, साड़ी आदि उपहार स्वरूप भेंट किए गये।

दोनों लड़कियां लक्ष्मी व रानी तीन वर्ष की उम्र से ही इस संस्थान में रह रही थीं जिनकी आयु 18 वर्ष से ऊपर होने के पश्चात लक्ष्मी का विवाह जयपुर निवासी जितेन्द्र जैन एवं रानी का विवाह कोटा निवासी विनोद पोरवास के साथ सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर कोटा की विभिन्न समाजसेवी संस्थाओं के प्रतिनिधि, तथा प्रतिष्ठित गणमान्य नागरिक उपस्थित थे। संस्थान की संचालिका श्रीमती प्रसन्ना भंडारी ने सभी आगंतुकों का स्वागत किया तथा संस्थान के अध्यक्ष सी.एम. सक्सेना ने सभी का आभार व्यक्त किया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 22 फरवरी, 2015 से 28 फरवरी, 2015

# दोनों हाथों से भर-भरकर दे

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

**दिवो विष्ण उत वा पृथ्व्याः, महो विष्ण उरोरन्तरिक्षात्।**
**हस्तौ पृणस्व बहुभिर्वसव्यैः, आप्रयच्छ दाक्षिणादोत सव्यात्।।**

अथर्व 7.26.8

ऋषिः **मेधातिथिः**। देवता **विष्णुः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● **(विष्णो)** हे सव्रव्यापक परमात्मन्! **(दिव)** द्युलोक से **(उत वा)** और **(पृथिव्याः)** पृथिवी–लोक से [तथा] **(विष्णो)** हे विश्वान्तर्यामिन्! यज्ञ के देव! **(महः)** महनीय **(उरोः)** विस्तीर्ण **(अन्तरिक्षात्)** अन्तरिक्ष–लोक से **(बहुभिः)**वहुत– से **(वसव्यैः)** ऐश्वर्य–समूहों से **(हस्तौ)** दोनों को **(पृणस्व)** भर ले। **(दक्षिणात्)** दाहिने हाथ से **(आ प्रयच्छ)** दान दे **(उत)** और **(सव्यात्)** बाएँ से [भी] (आ [प्रयच्छ]) दान दे।

● हे विष्णु! हे सर्वव्यापक! हे विश्वान्तर्यामिन्! हे विश्व–ब्रह्माण्ड के स्वामिन! तुम अपूर्व धनाधीश हो। विश्व के द्युलोक, अन्तरिक्ष–लोक और पृथिवी–लोक में जो धन बिखरा पड़ा है, वह सब तुम्हारा ही है। अतः तुम धन–कुबेर हो। एक और तुम धनपति हो ओर हम अकिंचन हैं। अतः हम चाहते हैं कि तुम अपने कोष में से दाहिने–बाएँ दोनों हाथों से भर–भरकर हमें दान दो। तुम्हारे रचे द्यु–लोक में प्रकाश का अनुपम पारावार भरा पड़ा है। वह प्रकाश तुम हमें भी प्रदान करो। तुम्हारे रचे विशाल अन्तरिक्ष–लोक में वायु और पर्जन्य का सागर उमड़ रहा है। उसमें से हमें भी प्राण–वायु और अमृतमय वृष्टि–जल प्रदान करो। तुम्हारे रचे पृथिवी–लोक से सुवण, रजत, ताम्र अयस, हीरे, मोती आदि ऐश्वर्यों की निधियाँ भरी हुई हैं। वे ऐश्वर्य तुम हमें भी प्रदान करो। अल्प मात्रा में नहीं, प्रचुर मात्रा में प्रदान करो, क्योंकि हम ऐश्वर्यमय जीवन जीने की ही साध लिये हुए हैं।

पर हे विश्वव्यापी देव! हम केवल इन भौतिक ऐश्वर्यों का ही पाकर सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहते। हम शरीरस्थ द्यु–लोक, अन्तरिक्ष–लोक और पृथिवी–लोक के ऐश्वर्यों को भी पाने के लिए आतुर हो रहे हैं। हमारा अन्नमय कोश ही पृथिवी–लोक है, जिसमें शरीर की त्वचा से लेकर अस्थि–पर्यन्त सब ढांचा आ जाती है। असका ऐश्वर्य है शारीरिक स्वास्थ्य और शारीरिक बल, जिसके बिना मनुष्य का जीवन–यापन,व्यान,उदान, समा, इन पांचों से तथा कर्मेन्द्रियों से मिलकर प्राणमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है प्रागण, अपानन आदि क्रियाओं का समुचित रूप से होते रहना तथा हस्त–पादादि कर्मेन्द्रियों को कार्य–क्षम बने रहना। मन और ज्ञानेन्द्रियों से मिलकर मनोमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है मन के माध्यम से ज्ञानेन्द्रियों का ज्ञान–प्राप्ति में सहायता होना तथा मन का सत्यसंकल्प करना। ज्ञानेन्द्रियों–सहित बुद्धि विज्ञानमयकोश कहलाता है। इसका ऐश्वर्य है ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान पर ऊहापोह करके निश्चयात्मक ज्ञान अर्जित करना। आनन्दमय कोश द्यु–लोक है, जहाँ हृदयपुरी में प्रतिष्ठित आत्मा के अन्दर ब्रह्म का वास है। इसका ऐश्वर्य है ब्रह्मानन्द की प्राप्ति। हे विष्णुदेव! तुम इन समस्त ऐश्वर्यों से भी भरपूर करने की कृपा करते रहो।

हे जगत्पिता! तुम निरैश्वर्य की अवस्था से पार करके हमें अधिकाधिक ऐश्वर्य प्रदान कर कृतार्थ करते रहो। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

# एक ही रास्ता

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में बात हो रही थी कि सूर्य का चौथा गुण है अपने नियम में कभी ढील नहीं होने देना, लापरवाही नहीं होने देना। वह कभी छुट्टी नहीं मांगता। जीवन का एक नियम अपनाओ, इसी पर चलते जाओ, तभी तुम्हारे अन्दर सूर्य का गुण आएगा। तब तुम ओ३म् की उपासना कर सकोगे। सूर्य का पाँचवाँ गुण है कि वह हानिकारक कृमियों को मार देता है, समाप्त कर देता है। ओ३म् के उपासक को भी यह सब कुछ करना पड़ता है।

वेद का नाम त्रायी विद्या है। तीन प्रकार की विद्या का इसमें वर्णन है–ज्ञान, कर्म और उपासना। इन तीन विद्याओं का निचोड़ तीन बिन्दु हैं–भूः, भुवः, स्वः।

भूः–का अर्थ है प्राण और यह पृथ्वीलोक। भुवः–का अर्थ है रक्षा करने वाला और यह अनंत सूर्य, तारों और चाँदों से भरा हुआ आकाश। स्वः–का अर्थ है सुखों को देने वाला और वह सब कुछ जो आकाश से ऊपर और परे है। इन्हीं तीनों को अस्ति, भवति, प्रीति भी कहते हैं। हिन्दी में आप इन तीनों को, 'है, होना और सुख की ओर बढ़ना' कह सकते हैं। इन्हीं तीनों को एक प्रकार से 'सत्, चित् और आनन्द' कहा जाता है। ईश्वर को हम सविता कहते हैं। सविता का अर्थ है प्रेरणा करने वाला। बीज, वृक्ष और फल–ये हैं भूः, भुवः, स्वः।

अब आगे...

एक सज्जन के घर में था मैं। रात का समय था, बिजली फेल हो गई। एक–दो मिनट बिजली नहीं आई, तब शोर मचा कि मोमबत्ती जला लो। मोमबत्ती के लिए कोई स्थान निश्चित हो तब तो मिले, नहीं तो अँधेरे में मिले किस प्रकार? किसी ने कहा, "दियासलाई लाओ, मोमबत्ती तलाश करनी है।" अब दियासलाई ही नहीं मिलती। सौभाग्य से एक सज्जन वहाँ थे, उनकी जेब में दियासलाई थी। उनसे डिबिया लेकर मोमबत्ती की खोज होने लगी। एक, दो, दस, बीस, कितनी ही तीलियाँ जल गईं, मोमबत्ती नहीं मिली। तब किसी ने कहा, "अरे भाई, बाज़ार से मोमबत्ती मँगा लो न, पता नहीं घर में है भी या नहीं।" नौकर दौड़ा–दौड़ा गया। मोमबत्ती ले आया। अब देखा तो डिबिया में तीलियाँ ही समाप्त हो गई हैं। नौकर को फिर दौड़ाया गया। डिबिया आई, मोमबत्ती जलाने लगे तो बिजली आ गई। गृहस्वामी थककर कुर्सी पर बैठ गए; लम्बी साँस लेकर बोले, "क्या खाक स्वराज्य मिला है देश को! बार–बार बिजली बन्द हो जाती है।"

अब इन सज्जन को वह स्वराज्य ही बुरा प्रतीत होने लगा जिसके लिए देश के हज़ारों मनुष्यों ने इतने बड़े–बड़े बलिदान दिए। स्वराज्य को गालियाँ देते हैं वे। यह नहीं सोचते कि घर में कोई वस्तु ठिकाने से भी रखनी चाहिए। इन दुःखों को कौन पैदा करता है? निश्चितरूप से हम स्वयं पैदा करते हैं; पैदा करके हम स्वयं ही चिल्लाते हैं, शिकायत करते हैं।

इसी प्रकार कड़वा बोलने से भी दुःख होता है। कई लोग तो कड़वा बोलने और गालियाँ देने को अपना स्वभाव बना लेते हैं। एक बार लाहौर के अनारकली बाजार में भल्ला जी की दुकान में मैं खड़ा था। बाजार में दो व्यक्तियों में झगड़ा हो गया। एक आदमी ने साधारण–सी गाली दे दी, दूसरा व्यक्ति उलझ पड़ा। बात अदालत तक पहुँची। मजिस्ट्रेट ने गाली देनेवाले से पूछा, "तुमने इस आदमी को गाली क्यों दी?" गाली देनेवाले ने तीन–चार मोटी–मोटी गालियाँ देकर कहा, "कौन कहता है मैंने गाली दी? मैं गाली देता ही नहीं।" मजिस्ट्रेट ने मुस्कराकर कहा, "मैं समझ गया साहब! अब किसी की गवाही की आवश्यकता नहीं।"

कई लोग कड़वा बोलने, निन्दा और चुगली करने का स्वाभाव बना लेते हैं। ये माताएँ हैं न? इन्हें बहुत आनन्द आता है दूसरे घर में जाकर अपने घर की बातें कहने में। इन्हें यह पता नहीं लगता कि दूसरों से कहने पर दुःख कम नहीं होता। लोग दुःख को बाँट नहीं लेते, केवल

thearyasamaj.org



दिल–ही–दिल में हँसते हैं–

**'तुलसी' पर घर जायके, दुःख न कहिये रोय।**
**लोक–हँसाई होत है, बाँट सकै नहीं कोय।।**

परन्तु तुलसी जी तो चले गए, इन माताओं को इससे क्या! ये पहुँचती हैं दूसरे घर में– बखान आरम्भ करती हैं अपने घर का, मेरी बहू ऐसी है, मेरी सास ऐसी है, मेरी ननद ऐसी है, मेरी जिठानी ऐसी है। हर बात मिर्च–मसाले लगकर, बड़ी होकर, फैलकर वापस घर में पहुँचती है। वहाँ महाभारत शुरू हो जाता है। अब इस महाभारत को कौन पैदा करता है? इस दुःख को बढ़ाता कौन है? क्या मैं ऐसा करता हूँ?

स्वयं ही हम दुःख पैदा करें, स्वयं ही चिल्लाते फिरें, यह तो ठीक नहीं।

ऐसे और भी कितने ही दुःख हम स्वयं ही उत्पन्न करते हैं। समाज के अन्दर ऐसे रस्म और रीतियाँ हमने आरम्भ कर रक्खी हैं, जिनसे दुःख के अतिरिक्त सुख कभी हो नहीं सकता। सबसे बड़ा दुःख तो यह है कि लड़कियों के लिए लड़के नहीं मिलते। लड़कियों के लिए यह रोग हमने पैदा नहीं किया तो किसने किया है? हर व्यक्ति चाहता है कि मेरी लड़की का विवाह गवर्नर से हो जाये। अब गवर्नर तो प्रान्त में एक होता है। एक लड़की की शादी हो जायेगी उससे। बाकी लड़कियाँ क्या करेंगी? गृहस्थ–आश्रम को ऋषियों ने सबसे ऊँचा और महान् कहा था। आज वही गृहस्थ–आश्रम नरकधाम बन गया है। क्यों? इसलिए कि ऐसे लोग गृहस्थी बनने का प्रयत्न करते हैं, जिन्हें गृहस्थी बनने का वास्तव में कोई अधिकार नहीं। बहुत बड़ी योग्यता इसके लिए होनी चाहिए। मकान का नक्शा बनवाना हो तो हम अच्छे इंजीनियर और नक्शा बनाने वाले को ढूँढ़ते हैं। आपरेशन कराना हो तो सर्जन को ढूँढते है। हर आदमी को तो हम सर्जन का कार्य नहीं सौंप देते। हर व्यक्ति को सर्जन की छुरी दे दी जाये, हर व्यक्ति यदि छुरी चलाने लगे, तो तीन–चार मास में दिल्ली की बढ़ती हुई जनसंख्या की समस्या हल हो जाये। अच्छे हो जायें सब लोग। जान ही बाकी न रहे। नक्शा बनवाने के लिए, ऑपरेशन करवाने के लिए हम योग्य आदमी को ढूँढ़ते हैं। और उससे बड़े और सबसे ऊँचे आश्रम में प्रविष्ट होने के लिए कोई योग्यता नहीं। ऐसी दशा में गृहस्थ–आश्रम नरकधाम नहीं बनेगा तो और क्या होगा?

ऋग्वेद के मण्डल 10, सूक्त 85, मन्त्र 44 में लिखा है कि चार गुण हों तो गृहस्थ–आश्रम में प्रविष्ट होना चाहिए; न हों तो नहीं होना चाहिए। पहला गुण है–शरीर का स्वस्थ और शक्तिशाली होना, शरीर में शक्ति होना। जो लोग मरियल टट्टू हैं, उनके लिए गृहस्थ–आश्रम में कोई जगह नहीं। दूसरा गुण है–विशाल हृदयवाला होना। तीसरा गुण है–अच्छी मेधावाला होना। चौथा गुण है– हमेशा प्रसन्न रहना। ये चार गुण जिनके अन्दर हों केवल उन्हीं को गृहस्थी बनने का अधिकार है। ऐसे लोगों को नहीं, जिनके मस्तिष्क का पारा ज़रा –सी बात पर 106 डिग्री तक पहुँचता हो, जो हर समय मुँह बिसूरे रहते हों, जो हर बात को केवल स्वार्थ के दृष्टिकोण से देखते हों। किसी भी व्यक्ति को जो गृहस्थ में प्रविष्ट होना चाहता है, देखना चाहिए कि ये चार गुण उसके अन्दर हैं या नहीं? जो जोग इन गुणों के देखे बिना विवाह करा बैठे हैं, उन्हें चाहिए कि अपने हृदयों को टटोलें। यदि उनके अन्दर भी ये गुण नहीं हैं तो उन्हें पैदा करने का यत्न करें। गृहस्थ में एक साथी के अन्दर भी ये गुण हों तो गृहस्थ चलता है। दोनों में न हों तो फिर 'बाबा भी गर्म, बाबा के चने भी गर्म' वाली बात होती है। गृहस्थ–आश्रम सुखी नहीं बनता। जो दुःख हमने स्वयं ही उत्पन्न किये हैं, उन्हें दूर करने का यत्न भी हमें स्वयं करना चाहिए। हाँ, जिन दुःखों को दूर करने में हम सफल न हों, उनके लिए ईश्वर की सहायता माँगनी चाहिए अवश्य। ऐसी सहायता मिलती है। ईश्वर की कृपा से दुःख दूर होते हैं। वह दुःखों का नाश करने वाला है। अपने देश के अन्दर हमने एक पाप किया, उसका फल हमें भोगना पड़ा। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र का विभाजन कोई जात–पाँत का विभाजन नहीं था, केवल समाज के कार्यों का विभाजन था। उसे हमने जात–पाँत का आधार बना दिया, ऊँच–नीच को आरम्भ कर दिया। छुआछूत को शुरू कर दिया। गलत बात थी यह। गलत परिणाम हुआ इसका। काम–विभाजन से कोई ऊँचा नहीं होता, कोई नीच नहीं बनता। मेरे शरीर में ये पाँव हैं न? शूद्र का कार्य करते हैं ये। कैलास की यात्रा में पिस्सुलेक घाटी में मैं पाँव से फिसल गया, घायल हो गया। डेढ़ मील तक मैं इस घायल पाँव के साथ ही चलता रहा। मेरा पाँव घायल हो गया, क्या इसीलिए इसे काटकर फेंक देता? काटकर फेंका नहीं मैंने। इसे अछूत नहीं बनाया। मैं इसका मूल्य जानता था। हर अंग का अपना मूल्य है – सिर का, भुजाओं का, पेट का, पाँव का–हर वस्तु आवश्यक है। कोई छूत या अछूत नहीं, कोई ऊँच या नीच नहीं। इस बेकार के अभिमान ने ऐसी दशा उत्पन्न कर दी है कि आज सब–कुछ गड़बड हो गया है। न ब्राह्मण हैं, न क्षत्रिय; शूद्र भी नहीं रहे, सब लोग वैश्य बन गये हैं, वे भी लँगड़े। वैश्य का कार्य है धन कमाना, परन्तु अपने पास नहीं रखना, अपितु दूसरों के भले के लिए खर्च कर देना। वेद भगवान् स्पष्ट शब्दों में कहता है–

''ओ कमाने वाले, सुन! अकेले नहीं खाना। तेरी इस कमाई पर केवल तेरा ही अधिकार नहीं, सारे समाज का अधिकार है। इस देश के अन्न, पानी, मिट्टी से बना है तेरा धन, सारे देश का अधिकार है इस पर''

यह थी वेद की आज्ञा। परन्तु जब यह अवस्था नहीं रही, तब? तब क्या हुआ? कम्युनिज़्म जाग उठा। ये कम्युनिस्ट क्या हैं? उन पूँजीपतियों की औलाद जो धन को अपने सीने से लगाये फिरते हैं। बैंक में एक 'फिक्स्ड डिपॉज़िट' हो गई। फिर एक और 'फिक्स्ड डिपॉज़िट'। फिर एक और, तब और, तब और, कोई अन्त नहीं। मैं कम्युनिज़्म को अच्छा नहीं कहता। कम्युनिज़्म मनुष्य को सुखी नहीं करेगा, सोशलिज़्म भी नहीं करेगा। जैसा समाज आज बन रहा है, उसमें दान–पुण्य समाप्त हो जायेगा। नित–नये टैक्स आज लग रहे हैं। प्रत्येक व्यक्ति कहता है–हाथ तंग हो गया, दान कहाँ से करें? हर तीन सौ या चार सौ वर्ष पश्चात् दुनिया में यह दशा उत्पन्न होती है। लोग समाजवाद से पूँजीवाद की ओर, पूँजीवाद से समाजवाद की ओर बढ़ते हैं। वास्तव में दोनों गलत हैं। परन्तु आज जो ग़लत अवस्था उत्पन्न हुई, इसका उत्तर दायित्व किसपर है? निश्चितरूप से उन पूँजीपतियों पर जिन्होंने धन को अपना देवता बना लिया।

एक बार स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी के साथ मैं कलकत्ता गया। एक सेठ जी के पास हम दान लेने गये। सेठ साहब ने कहा, ''आप पहले मुझसे बात कर लीजिये, मेरे साथ खाना भी खाइये।'' हमने कहा, ''बहुत अच्छा।'' भोजन के समय हम उसके पास पहुँचे। हमारा भोजन तो ठीक था, परन्तु सेठ जी की थाली चाँदी की थी। उसमें एक कटोरा भी चाँदी का था। थाली में जापानी गुब्बारे के समान फूला एक फुलका पड़ा था। चाँदी के कटोरे में थोड़ा–सा पीला पानी था। पता लगा कि सेठ जी यही एक फुलका और पीला पानी खायेंगे। आश्चर्य से हमने पूछा, ''सेठ जी, आप इतना ही खाते हैं?'' वे बोले, ''हाँ, इससे अधिक पचता नहीं।'' हमने कहा, ''कोई मक्खन या दूध तो लेते होंगे प्रातः?'' उन्होंने कहा, ''राम–राम करो जी! मेरे छोटे भाई ने एक बार दूध पिया था, पेट में बादल–जैसे गर्जने लगे। तब से हमारे घर में कोई दूध नहीं पीता।'' महात्मा जी ने कहा, ''लस्सी तो पीते होंगे आप?'' सेठ जी बोले, ''एक बार दो दिन लस्सी पी थी, महीनाभर जुकाम रहा, उसके बाद कभी नहीं पी।'' मैंने कहा, ''बादाम, पिस्ता किशमिश तो खाते होंगे कभी?'' वे बोले, "बादाम पचते नहीं, पिस्ता बहुत गर्म होता है, किशमिश मैं जानता नहीं कि क्या होती है।'' महात्मा जी ने कहा, ''फिर फल ही खा लिया करो।'' सेठ जी बोले, ''वे मेरे अनुकूल नहीं बैठते।'' मैंने दिल–ही दिल में कहा, 'फिर संखिया खाओ, वही तुम्हारे लिए रह गया है।' यह है कम्युनिज़्म का वास्तविक कारण। ये लोग स्वयं न खा सकें तो दूसरों को ही खिला दें। दुनिया में भूख न रहने दें। गरीबी न रहने दें। इनके ग़लत दृष्टिकोण से कम्युनिज़्म पैदा होता है। वे कम्युनिस्ट वास्तव में इन्हीं पूँजीपतियों की औलाद हैं, जो इनसे बहुत घबराते हैं। बुरा काम ये स्वयं करते हैं, जब दुःख आता है तो कहते हैं भगवान् की मर्जी। एक अद्भुत खेल हमने बना रक्खा है। कोई अच्छी बात हो जाय तो हम कहते हैं, ''देखो, मैंने क्या कमाल किया!'' कोई बुरी बात हो जाये तो कहते हैं, "भगवान् की ऐसी इच्छा थी।'' इसका अर्थ तो यह यह हुआ, अच्छे–अच्छे काम हम करते हैं, भगवान् केवल बुरे कार्य करता है। ऐसा तो है नहीं। हम स्वयं ही अपने लिए दुःख उत्पन्न करते हैं, स्वयं ही चिल्लाते हैं कि दुःख कहाँ से आ गया।

**शेष अगले अंक में....**

**यह थी वेद की आज्ञा। परन्तु जब यह अवस्था नहीं रही, तब? तब क्या हुआ? कम्युनिज़्म जाग उठा। ये कम्युनिस्ट क्या हैं? उन पूँजीपतियों की औलाद जो धन को अपने सीने से लगाये फिरते हैं। बैंक में एक 'फिक्स्ड डिपॉज़िट' हो गई। फिर एक और 'फिक्स्ड डिपॉज़िट'। फिर एक और, तब और, तब और, कोई अन्त नहीं। मैं कम्युनिज़्म को अच्छा नहीं कहता। कम्युनिज़्म मनुष्य को सुखी नहीं करेगा, सोशलिज़्म भी नहीं करेगा। जैसा समाज आज बन रहा है, उसमें दान–पुण्य समाप्त हो जायेगा। नित–नये टैक्स आज लग रहे हैं। प्रत्येक व्यक्ति कहता है–हाथ तंग हो गया, दान कहाँ से करें? हर तीन सौ या चार सौ वर्ष पश्चात् दुनिया में यह दशा उत्पन्न होती है। लोग समाजवाद से पूँजीवाद की ओर, पूँजीवाद से समाजवाद की ओर बढ़ते हैं। वास्तव में दोनों गलत हैं। परन्तु आज जो ग़लत अवस्था उत्पन्न हुई, इसका उत्तर दायित्व किसपर है? निश्चितरूप से उन पूँजीपतियों पर जिन्होंने धन को अपना देवता बना लिया।**

thearyasamaj.org



# आर्यो! जागो और वेद प्रचार में जुट जाओ

● पं. नंदलाल निर्भय सिद्धान्ताचार्य

आर्यो! जिस समय वैदिक सभ्यता–संस्कृति संसार से मिटने जा रही थी और धर्म के नाम पर पाखण्डी लोग यज्ञों में नर बलि, पशुबलिपक्षी बलि दे रहे थे, समुद्र यात्रा अर्थात् विदेशों में जाना अशुभ समझा जाता था, स्त्रियों और शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं था। विधर्मी लोग भारतीयों को जाहिल समझते थे तथा गउओं की हत्या कराते थे तथा भोली भाली अनपढ़ जनता को ईसाई–मुसलमान बना रहे थे। ऐसे विषम समय टंकारा (गुजरात) प्रान्त में जगत् गुरु महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्म हुआ।

महर्षि दयानन्द जी के पिता पंडित अम्बाशंकर और माता यशोदा बाई दोनों ही पौराणिक विचारों के थे। उन्होंने शिवरात्रि को अपने पुत्र मूलशंकर (स्वामी दयानन्द का बचपन का नाम) को व्रतोपवास रखवाया। पूरा परिवार शिव मन्दिर में जागरण कर रहा था। दो बजे के बाद सभी भक्त जन व पुजारी सो गए लेकिन 8 वर्ष का बालक मूलशंकर जागता रहा। थोड़ी देर में उसने देखा कि कुछ चूहे शिवलिंग पर चढ़कर चढ़ावा खाने लगे। मूलशंकर ने देखा तो चकित रह गया और उसने सोचा कि यह तो सच्चा शिव नहीं है। वस्तुतः सच्चा शिव कोई और है। उसने अपने पिताजी को इस विषय में अपनी शंका बताई किन्तु पिता अम्बाशंकर ने उसे बुरी तरह फटकारा। इस घटना ने बालक मूलशंकर को झकझोर दिया। उसके हृदय में वैराग्य उत्पन्न कर दिया।

जिस समय घर में उनके विवाह की तैयारियां चल रही थीं वे रात को घर से निकल गए और फिर कभी घर नहीं लौटे।

स्वामी जी अपनी ज्ञान पिपासा मिटाने के लिए हजारों साधुओं व विद्वानों से मिले। वन, उपवन, पहाड़ों, नदियों पर गए लेकिन कहीं भी उन्हें सच्चे शिव के दर्शन नहीं हुए। स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से उन्होंने सन्यास लिया तथा उनकी आज्ञा अनुसार स्वामी विरजानन्द सरस्वती से वेद पढ़ने के लिए मथुरा नगरी पहुँचे। उन्होंने स्वामी विरजानन्द जी की निष्ठापूर्वक सेवा करके वेद ज्ञान प्राप्त किया तथा गुरुदेव की आज्ञा पाकर भारत में घूम–घूमकर वेद प्रचार किया। उन्होंने संसार को कर्म प्रधानता का सन्देश दिया। उन्होंने वेद विरोधी मत मतानन्तरों का खण्डन किया। देश की जनता को गऊ सेवा का पाठ पढ़ाया। स्त्रियों और शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकारी बताया। छुआ–छात, बाल विवाह तथा अनमेल विवाह को गलत बताया। स्वामी दयानन्द जी ने सर्वप्रथम विदेशी राज्य को बुरा बताकर देश की जनता को आजादी का पाठ पढ़ाया। उनके शिष्य मुनिवर गुरुदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज, लाला लाजपतराय, लाल साईंदास, महात्मा नारायण स्वामी आदि ने आर्य समाज में रहकर जीवन भर वेद प्रचार किया।

महर्षि दयानन्द जी महाराज परम ईश्वर विश्वासी, धर्मात्मा, त्यागी, तपस्वी, महान देशभक्त, अदम्य साहसी, स्वाभिमानी तथा निर्भीक देशभक्त सन्यासी थे। स्वामी जी ने जीवन भर पाखण्ड एवं वेद विरोधी मत–मतान्तरों का खण्डन किया। वे कभी भी पाखण्डी धूर्त अत्याचारी व्यक्तियों से समझौता नहीं करते थे। अंग्रेज उन्हें बागी फकीर बताते थे। उनका स्पष्टवादी होना ही उनके बलिदान का मुख्य कारण बना। ऐसा निराला वीर बहादुर वेदों का प्रकाण्ड विद्वान संसार में अब तक कोई नहीं हुआ। अपने महान कार्यों से वे आज भी संसार में अमर हैं और अमर ही रहेंगे।

आर्यो! देव गुरु दयानन्द ने हमारी भलाई की खातिर भारी कष्ट उठाए तथा सत्रह बार घोर विषपान किया लेकिन कभी भी नहीं घबराए। आज हम संसार में लाखों की संख्या में हैं फिर भी जो कार्य करना चाहिए था हम वह कार्य नहीं कर पाए हैं। आज हम आपस में मुकदमे/वाजी एवं झगड़ा करने में लगे हुए हैं। ऐसी हालत में महर्षि का "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का सपना कैसे साकार होगा?

प्रिय साथियो! इस समय देश में भारतीय जनता पार्टी की सरकार है और श्री नरेन्द्र मोदी भारत के प्रधानमंत्री हैं। आश्चर्य की बात है कि स्वामी विवेकानन्द ने कभी भी किसी प्रकार का आजादी के लिए संघर्ष नहीं किया और वे जीवन भर जड़ पूजा करते रहे तथा अन्त में क्षय–रोग का शिकार होकर मरे। यह कैसी विडम्बना है कि यह सरकार ऐसे व्यक्ति को राष्ट्र–सन्त घोषित करने जा रही है। आर्यो! अब तो जागो! एक बात अच्छी तरह समझ लो।

"धीर वीर बलवान बहादुर, जग में आदर पाते हैं।
कायर अरु कमजोर निठल्ले, दर–दर धक्के खाते हैं।।
वीर बनो, बलवान बनो तुम, वेदों का प्रचार करो।
दूर करो पाखण्ड जगत से, अविद्या रूपी तिमिर हरो।।
लेखराम, श्रद्धानन्द बनकर, शुद्धी चक्र चलाओ तुम।
वीर लाजपत, बिस्मिल बनकर, जग में धूम मचाओ तुम।।"

आर्य सदन बहीन, जनपद पलवल (हरियाणा)
चलभाष क्रमांक : 9813845774

# Thus Spoke Swami Dayanand

- All men and women (i.e., the whole mankind) have a right to study. Knowledge alone is the inexhaustible treasure; the more you spend it, the more it grows. All other treasures run out by spending, and the claimants inherit their shares as well. Thieves cannot steal this treasure, nor, can anyone inherit it.
- That country alone prospers where Brahmacharya is properly practised, knowledge is keenly sought after, and the teachings of the Vedic religion followed.
- The Swayamvara marriage, i.e., marriage by choice—the most ancient form of marriage in India—is the best form of marriage.
- Only those who faithfully discharge the high duties of a Brahmin can be called Brahmins. Even if a low-born man were to possess qualifications, accomplishments and character of a superior Class, he should be recognisd as such; and if a man, high-born though he be, were to act like a man of an inferior Class, he should be relegated to it.
- Classes of all persons should be determined according to their qualifications, accomplish-ments and character.
- Pitriyajna consists in serving learned men, great teachers, scholars, one's father, mother, old people, great men, and great yogis.
- Tarpana is anything done to please one's father, mother and other elders (who are alive), and make them happy.
- The husband is the adorable god for the wife, and the wife is the adorable goddess for the husband.

Compiled by — Satyapriya,
09868426592

(Sourced from the English translation of 'Satyarth Prakash' by Dr. Chiranjiv Bhardwaj and published as 'The Light of Truth' from D.A.V. Publication Division)

thearyasamaj.org



# उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

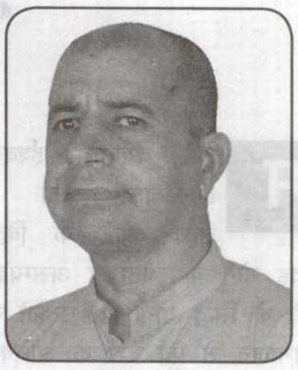

**शंका– वरदान या श्राप देना क्या संभव है? नहीं, तो फिर वह क्या है?**

**समाधान**– वरदान और श्राप देना संभव है। पर वैसा नहीं जैसा आपने पुराणों में पढ़ रखा है, या पौराणिक कथाओं में सुन रखा है कि – "जाओ, तुम्हें कोई नहीं मार सकेगा, तुम अमर हो गए हो।" सृष्टि के नियम के विरुद्ध वरदान गलत है। ऐसे वरदान नहीं होते हैं।

**प्रकृति के नियम से विरुद्ध जो बातें हैं, इस तरह का न वरदान होता है और न श्राप होता है।** सृष्टि नियम के अनुकूल वरदान भी होता है और श्राप भी होता है।

वरदान किसको कहते हैं? आशीर्वाद का नाम वरदान है। ऋषि–मुनि जी क्या कहते हैं:–

**"अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः। चत्वारि तस्य बर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम्।।"**

यह वरदान है कि– "जो बड़ों का आदर सम्मान करते हैं, माता–पिता को, गुरुजनों को नमस्ते करते हैं, उनके आदेश का पालन करते हैं, उनकी सेवा करते हैं, उनकी चार चीजें बढ़ती हैं। वे हैं – आयु, विद्या, यश और बल।" माता–पिता उनको आशीर्वाद देते हैं, गुरुजन आशीर्वाद देते हैं कि बड़ी उम्र वाले हो, खूब फलो–फूलो, आगे बढ़ो, उन्नति करो, सुखी रहो। ऐसा वरदान ठीक है।

श्राप क्या है? एक व्यक्ति ने अपराध किया और उसको कहा– देख, तूने अपराध किया है, तुझे दंड मिलेगा। इसे जेल में डाल देना चाहिए। ऐसे ही किसी ने उसको डाँट लगा दी। अब फिर वह बाद में पकड़ा भी गया, उस पर केस चला और उसको जेल भी हो गयी। उसका श्राप सिद्ध हो गया। उसने सच बात कही।

अपराधी को अपराध से बचाने के लिए अथवा उसको समझाने के लिए व्यक्ति उसको डाँटता है, रोकता है। फिर भी वह नहीं मानता है तो फिर उसको कहता है कि – देख तू नहीं मानता, तुझे दंड मिलेगा। और वो तो होता ही है।

कुछ काल्पनिक श्राप ऐसे भी बोले जाते हैं। एक मनुष्य था, वह गड़बड़ यानी बुरे काम करता था, **उसको श्राप दिया – तू अभी–अभी यहाँ पर सूअर बन जा, तू अभी–अभी इसी जन्म में कुत्ता बन जा। ऐसा संभव नहीं होगा।**

व्यक्ति इसी जन्म में तो कुत्ता नहीं बन सकता। हाँ, मरने के बाद भले ही वह बन जाए। भगवान उसको कर्म के अनुसार दंड दे देंगे, वो अलग बात है, पर जीते जी इसी जन्म में उसको तोड़–मरोड़ कर बिल्ली, कुत्ता नहीं बनाया जा सकता। इस तरह के कोई श्राप आपने कथाओं में सुने हों तो वो गलत हैं।

**शंका– क्या अपनी योगशक्ति के द्वारा योगी शक्तिपात का प्रयोग कर वेदार्थ संबंधी ज्ञान संक्रमित कर सकता है?**

**समाधान**– शक्तिपात के द्वारा वेदार्थ का ज्ञान कराने की बात मेरी दृष्टि में ठीक नहीं है।

वेदार्थ ज्ञान करने के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने दो विकल्प 'ऋग्वेदादिभाष्य–भूमिका'के पठनपाठन–विषय के अन्त में बताए हैं:–

1. व्याकरण अष्टाध्यायी धातुपाठ उणादिगण – चार ब्राह्मण इन सब ग्रन्थों को क्रम से पढ़ के।

2. अथवा जिन्होंने उन सम्पूर्ण ग्रन्थों को पढ़ के जो सत्य–सत्य वेद व्याख्यान किए हों, उनको देख के वेद का अर्थ यथावत् जान लेवें।

यहाँ शक्तिपात से वेदार्थ ज्ञान का उल्लेख कहीं भी नहीं है।

**शंका– ईश्वर के द्वारा संसार बनाने से पूर्व जीव ने कर्म कहाँ किए, कर्मफल के लिये जगत् कैसे बनाया?**

**समाधान**–ईश्वर ने जब यह जगत् बनाया तो जिन कर्मों का फल सृष्टि के आरंभ में दिया, वो कर्म हमने इससे पिछली सृष्टि में किए थे। अब आप यह पूछेंगे कि जब पिछली सृष्टि बनाई तब कर्म कहाँ से आए? उत्तर है कि उससे पिछली सृष्टि से आए। इसी प्रकार से उसके पीछे चलते जाओ।

एक व्यक्ति ने पूछा कि जब भगवान ने पहली बार सृष्टि बनाई, तब कर्म कहाँ से आए तो मैंने कहा– पहली बार सृष्टि बनाई ही नहीं। अब यह उत्तर समझ में नहीं आया, टेढ़ा है न! इस बात को समझना कठिन है।

**पहली बार ईश्वर ने सृष्टि कभी बनाई ही नहीं। यह अनादिकाल से चल रही है।** तीन वस्तुएँ अनादि हैं– ईश्वर, जीव, प्रकृति। यह सबसे पहला सिद्धांत (प्रायमरी लॉ) है। अगर यह समझ में आएगा तो आगे बहुत सी बातें समझ में आ जाएंगी। अगर यह समझ में नहीं आएगा तो कुछ समझ में नहीं आएगा।

ईश्वर ने पहली बार कभी भी सृष्टि नहीं बनाई। **अनादिकाल से ईश्वर सृष्टि बना रहा है और जीवात्मा अनादिकाल से कर्म कर रहा है और प्रकृति भोग दे रही है।** प्रकृति हमारे कर्मों का फल हमको भुगवा रही है। तीनों अनादिकाल से चल रहे हैं।

विपक्ष को सोचने से बात जल्दी समझ में आती है। यह भी एक समझने का तरीका है। कल्पना कीजिए कि– पहली बार ईश्वर ने सृष्टि बनाई। जब पहली बार बनाई, तो ईश्वर केवल मनुष्य बनाएगा या गाय–घोड़ा भी बनाएगा? अकेला मनुष्य बनाएगा तो अकेला मनुष्य तो जी नहीं सकता। उसको गाय भी चाहिए, घोड़ा भी चाहिए, गधा भी चाहिए, गेहूँ भी चाहिए, चना भी चाहिए। मनुष्य का जीवन ठाक–ठाक चलाने के लिए ईश्वर भेड़–बकरी, गाय, गधा–घोड़ा, कुत्ता, बिल्ली, गेहूँ, चना, सब बनाएगा। ऐसी स्थिति में प्रश्न होगा कि पहली बार ईश्वर ने किसी को मनुष्य बना दिया, किसी को बिल्ली बना दिया, किसी को कुत्ता बना दिया, किसी को वृक्ष बना दिया, तो बिना कर्म के उसने फल दिया कि नहीं दिया? इससे तो यह भी मानना पड़ेगा कि ईश्वर ने पहली बार बिना कर्म के फल दिया। और यदि यह मान लिया कि पहली बार ईश्वर ने बिना कर्म के फल दिया तो यह प्रश्न होगा– क्या ईश्वर न्यायकारी हुआ कि अन्यायकारी हुआ? तब तो वह अन्यायकारी हुआ। जब पहली बार सृष्टि बनाते ही ईश्वर अन्यायकारी हो गया तो दूसरी बार क्या न्यायकारी रहेगा? फिर तीसरी बार क्या हम उस पर भरोसा करेंगे? क्या वह हमारे साथ न्याय करेगा? क्या आप लोग ईश्वर को अन्यायकारी मानने के लिए तैयार हैं? नहीं हैं न। इससे सिद्ध हुआ कि ईश्वर ने पहली बार सृष्टि नहीं बनाई।

ईश्वर न्यायकारी तभी बना रहेगा, जब कर्म के आधार पर फल मिले और कर्म कहाँ से आएगा? वो पीछे से आएगा और पीछे से पीछे, पीछे से पीछे सृष्टि और कर्म मानेंगे, तब तो ईश्वर न्यायकारी बना रहेगा अन्यथा अन्यायकारी मानना पड़ेगा। तो ऐसा सोचेंगे तो थोड़ा समझ में आएगा।

दर्शनयोग महाविद्यालय
रोजड़वन, गुजरात

# योग–ध्यान एवं साधना शिविर का आयोजन किया जाएगा

आनन्दधाम (गढ़ी आश्रम) उधमपुर, जम्मू में आश्रम के संरक्षक एवं निदेशक पूज्यपाद महात्मा चैतन्यमुनि जी के सान्निध्य में दिनांक 11 से 19 अप्रैल 2015 तक निःशुल्क योग–ध्यान–साधना शिविर का आयोजन किया गया है। जिसमें अनुभवी आचार्यों एवं महात्माओं द्वारा उपासना, प्राणायाम, योगासन आदि कराए जाएंगे तथा योगदर्शन–पठनपाठन की भी मुख्य व्यवस्था है। शिविर में रोजड़, गुजरात से शिक्षित आचार्य श्री सन्दीप आर्यजी, प्रबुद्ध वैदिक प्रवक्ता श्री अखिलेश भारतीय जी आदि अन्य अनेक विद्वान भी पधार रहे हैं। डॉ. सुरेश जी योग द्वारा रोगोपचार भी करेंगे। इस अवसर पर पूज्य महात्मा जी के ब्रह्मत्व में सामवेद परायण यज्ञ का आयोजन किया गया है। शिविर में साधक अपनी शंकाओं का समाधान भी कर सकेंगे। आश्रम में पूज्य महात्माजी के सान्निध्य में पहले लगाए गए शिविरों में शिविरार्थियों के बहुत अच्छे अनुभव रहे हैं इसलिए साधकों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है अतः इच्छुक साधक अपना स्थान आरक्षित करने के लिए फोन नं. 09419107788, 09419796949 अथवा 09419198451 पर तुरन्त सम्पर्क करें।

thearyasamaj.org



# महर्षि दयानन्द के दो अधूरे स्वप्न

● मनमोहन कुमार आर्य

महर्षि दयानन्द ईश्वरीय ज्ञान–चार वेदों के उच्च कोटि के विद्वान थे। वह योग के ज्ञाता व असम्प्रज्ञात समाधि के सिद्ध योगी थे। उन्होंने देश के विभाजन से पूर्व देश के अधिकांश भाग का भ्रमण कर मनुष्यों की धार्मिक, सामाजिक तथा अन्य सभी समस्याओं को जाना व समझा था। उनके समय जितने भी देशी व विदेशी मत–मतान्तर थे, उनके स्वरूप व उनकी उत्पत्ति की परिस्थितियों पर विचार कर मनुष्य व प्राणीमात्र के हित को सम्मुख रखकर एक वैज्ञानिक व शोध छात्र की भांति उन्होंने उन्हें जाना भी था व समझा था। **सब मतों का अध्ययन करने व वेद ज्ञान पर अधिकार प्राप्त करने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि संसार में सभी मत–मतान्तरों की प्राचीन व अर्वाचीन पुस्तकों में पूर्ण सत्य व प्रामाणिक ज्ञान केवल वेदों में ही है।** वेदों में सत्य व पूर्ण ज्ञान यथा आध्यात्मिक, सामाजिक व भौतिक ज्ञान आदि विस्तृत रूप में होने के कारण ही उन्होंने वेदों को स्वीकार किया, उन्हें स्वतः प्रमाण का दर्जा दिया और उनका प्रचार किया। उनके प्रचार का उद्देश्य अन्यों की तरह कोई धर्म प्रवर्तक, अवतार या महन्त आदि बनने का नहीं था अपितु मनुष्य जाति का कल्याण ही उनका उद्देश्य था। इसी कारण उन्होंने अपने उद्देश्य से जुड़ी हुई कुछ बातों पर प्रकाश डाला है जिससे कि भ्रान्ति न हो। उन्होंने आध्यात्मिक, सामाजिक व व्यवहारिक जीवन विषयक अपने सत्य ज्ञान के प्रचार के आन्दोलन का एक नियम ही यह बनाया कि सत्य के ग्रहण और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। मनुष्य को अपना प्रत्येक कार्य सत्य और असत्य को विचार करके करना चाहिये। जो सत्य है, उसे स्वयं मानना व अन्यों से मनवाना मुझे अभीष्ट है। यही वेद सम्मत मनुष्य धर्म है। उनके लिए सत्य वह है जो प्रत्यक्ष आदि आठ प्रमाणों से सत्य सिद्ध हो तथा जिससे सभी मनुष्यों को समान रूप से लाभ हो व हानि किसी भी प्रकार से किसी की न हो। इसी कारण उन्होंने ईश्वर के पुराणों में वर्णित अलंकारिक व अविश्वसनीय स्वरूप को स्वीकार नहीं किया और ईश्वर व जीवात्मा के सत्य स्वरूप का अनुसंधान करते रहे।

ईश्वर व जीवात्मा को उन्होंने वेद और वैदिक साहित्य को पढ़कर जाना था और योग के अभ्यास से समाधि की अवस्था में ईश्वर व जीवात्मा के सत्य स्वरूप का प्रत्यक्ष वा साक्षात्कार करके उसे प्राप्त किया था। जीवात्मा के विषय में भी उन्होंने सभी मतों, सम्प्रदाय व मजहबों में वर्णित स्वरूप का अध्ययन किया, उसे पूरी तरह से जाना व समझा तथा उसे सत्य की कसौटी व नयाय दर्शन के आठ प्रमाणों पर परखा और अपनी खोज पूरी करने पर सभी प्रमाणों पर सत्य सिद्ध हुए आत्मा के स्वरूप को ही स्वीकार किया। वह ईश्वर व जीवात्मा आदि का सब प्रकार से सत्य ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद मौन व निष्क्रिय नहीं रहे अपितु अपने प्रणों व सुखों की चिन्ता किए बिना मनुष्य जाति के कल्याणार्थ इनका प्रचार करने के लिए उद्यत हुए जिसका परिणाम है कि आज हम जैसे साधारण हिन्दी पठित अध्येता अनुभव करते हैं कि हम ईश्वर, जीव व प्रकृति के यथार्थ स्वरूप को अपने बड़े–बड़े धर्माचार्यों के समान व यथार्थ रूप में जानते हैं। **उनके द्वारा अनुसंधान कर प्राप्त किया गया ईश्वर का संक्षिप्त स्वरूप है– 'सत्य, चित्त, आनन्दयुक्त, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, पक्षपातरहित, दयालु, अजन्मा अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, सृष्टिकर्त्ता तथा सभी मनुष्यों के लिए प्रतिदिन उपासनीय।' इसी प्रकार जीव का संक्षिप्त स्वरूप है–'सत्य, चेतन, आनन्द रहित, अल्पज्ञ, सूक्ष्माकार बिन्दुवत, अल्प शक्तिमान, ज्ञानेच्छु व कर्मशील, अपने शुद्ध स्वरूप में न्याय करने वाला, पक्षपात रहित, दयालु, अजन्मा, अनन्त, अमर, मूल स्वरूप में विकारों से रहित परन्तु सत्व, रज व तम गुणों के प्रभाव से कुछ अवगुणों व विकारयुक्त प्रवृत्तियों को धारण करने वाला और सत्य को जानकर व ग्रहण कर दुर्गुणों, दुर्व्यसनों व दुखों से मुक्त होने वाला का अनादि, ईश्वर जीवात्मा का आधार है, ईश्वर से विद्यादि धन व ऐश्वर्य की प्राप्ति करने वाला, ईश्वर से व्याप्य, एकादेशी, ससीम, अजर, अज्ञानावस्था में भयभीत होना, नित्य तथा अविद्या आदि से मुक्त होने पर पवित्र अवस्था को प्राप्त, कर्मों का कर्ता व उसके फलों का ईश्वर की व्यवस्था से भोगकर्त्ता है आदि।'** यह जीवात्मा का स्वरूप है जिसे उन्होंने सत्य के अनुसंधान से प्राप्त किया और अपने प्रवचनों, लेखों व पुस्तकों आदि के द्वारा इसका प्रचार किया। इसी प्रकार से प्रकृति का स्वरूप भी उनके सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थ, वेद भाष्य, 6 दर्शन व उपनिषदादि ग्रन्थों के अध्ययन से जाना जा सकता है।

हम यह लेख महर्षि दयानन्द के अनेक स्वप्नों की चर्चा में से दो स्वप्नों की चर्चा करने के लिए लिख रहे हैं। पहला यह कि उनके अनुभव व खोज का परिणाम यह निकला कि संसार में जो भिन्न–भिन्न मत हैं ये सब मनुष्यों के सुखों के पूरी तरह साधक नहीं, अपितु बाधक भी हैं। वेदों से इतर सभी मतों में अज्ञान भरा हुआ है जिसके कारण मनुष्यों को संसार में अनेक दुःख प्राप्त होते हैं। उनके अनुसार संसार में ईश्वर की केवल एक ही सत्ता है व सभी मतों, पन्थों व सम्प्रदायों में जिस ईश्वर का उल्लेख है, वह अलग–अलग न होकर एक ही सत्ता के भिन्न–भिन्न भाषाओं के शब्दों में वर्णन है। वह यह अनुभव करते थे कि सभी मतों के धर्माचार्यों को परस्पर प्रीतिपूर्वक एक साथ मिल कर सत्य मत व धर्म का अनुसंधान करना चाहिये और उस सत्य मत को संसार के सभी लोगों को मानना व उसका आचरण करना चाहिये। इसके लिए उन्होंने प्रयास भी किये थे परन्तु अन्य मतों के धर्माचार्यों से सहयोग न मिलने के कारण वह इसमें सफल नहीं हो सके। उनका यह कार्य आज भी अधूरा है। यह तथ्य है कि सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल तक के 1.96 अरब वर्षों तक वेदों पर आधारित केवल एक ही सत्य मत सारे संसार में प्रचलित रहा है जिसका आचरण कर संसार में कहीं अधिक सुख व शान्ति रही है। उस काल में वे समस्यायें नहीं थीं जैसी आजकल मत–मतान्तरों द्वारा उत्पन्न समस्यायें हैं। **इस विवाद रहित व सर्वमान्य सिद्धान्तों वाले मत वा धर्म, जो कि वर्तमान में वैदिक धर्म है, के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रयास होने चाहियें। इस लक्ष्य के प्राप्त न होने का एक कारण हमें वेदों के मानने वाले आर्य समाज के प्रचार की शिथिलता भी दृष्टिगोचर होती है।**

ऋषि दयानन्द के इस स्वप्न को पूरा करने के लिए जितने पुरुषार्थ व प्रयासों की आज आवश्यक है, उस कार्य में उनके अनुयायी बहुत पीछे हैं। यह भी कह सकते हैं कि अनेक अनुयायी संगठित होकर पूरे आत्म विश्वास व शक्ति से प्रचार नहीं कर पा रहे हैं जिससे संसार में ईश्वर, जीवात्मा, मनुष्यों के कर्तव्य व व्यवहार विषयक अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड, धर्मपरिवर्तन जैसी प्रवृत्तियां विद्यमान हैं। कुछ मतों की राजनैतिक महत्वाकांक्षायें भी बहुत बढ़ी हुईं हैं जिसमें वह धर्माधर्म, सत्यासत्य वा हिंसाहिंसा आदि का ध्यान न रखते हुए येन केन प्रकारेण अपने राजनैतिक लक्ष्य की प्राप्ति में लगे हुए हैं। दूसरी ओर भारत के धार्मिक मत व लोग हैं कि जो आज भी गहरी नींद में खतरों से अनभिज्ञ निद्रा व आलस्य से ग्रस्त हैं। यह लोग परस्पर असंगठित रहकर व अज्ञान व अन्धविश्वासों में लिप्त रहकर घातक प्रवृत्तियों के कार्यों में बाधक बनने के स्थान पर अपने व मानवता के शत्रुओं के सहयोगी बन रहे हैं। हम यह भी अनुभव करते हैं कि संसार के सभी मतों के एकीकरण व समरसता की बात तो बाद में है, पहले पौराणिक व आर्य समाजी ही परस्पर मिलकर सत्य के निर्णयार्थ कोई ठोस योजना बनायें व कार्य करें जिससे यह आपस में सभी धार्मिक विषयों में एक मत, एक विचार व एक सिद्धान्त हो जायें जिससे वेद व सनातन धर्म पर कोई संकट न आये। यदि संकट आये तो यह आने वाले संकटों पर विजय प्राप्त कर सकें। इस दिशा में आवश्यकता के अनुरूप कार्य नहीं हो रहा है जिससे हानि हो रही है और हमारे विरोधी मतों को लाभ हो रहा है जो गुप्त रूप से हमें समाप्त करना चाहते हैं। **अतः महर्षि दयानन्द के प्रथम स्वप्न कि विश्व के सारे मनुष्य का धर्म केवल एक है तथा उसके लिए प्रयास होने चाहिये का कार्य अवरुद्ध है।** महर्षि दयानन्द के अनुयायियों को इस दिशा में सघन प्रचार कर अपने पौराणिक भाइयों को सहमत करने का हर सम्भव प्रयास करना चाहिये। साथ ही ऐसे प्रयास भी जारी रहने चाहिये जिससे संसार के सभी लोगों का सत्य वेद मत पर विश्वास उत्पन्न किया जा सके। यह सुनिश्चित है कि महर्षि दयानन्द और आर्य समाज का लक्ष्य सारे संसार को एक सत्य मत पर स्थिर करना व कृण्वन्तो विश्वमार्यम् वा विश्व को श्रेष्ठ विचारों, सिद्धान्तों,मान्यताओं व आचरण वाला बनाना है जिसमें वेदों के ज्ञान की प्रमुख भूमिका होगी। इसी से विश्व में शान्ति व सबका कल्याण होगा। महर्षि दयानन्द का कथन है कि विश्व स्तर पर एक धर्म, एक भाषा, एक भाव व सबका एक सुख–दुख के सिद्धान्त को स्वीकार करने पर विश्व में पूर्ण शान्ति हो सकती है।

महर्षि दयानन्द देश में जन्मना जाति व्यवस्था से भी व्यथित थे। उन्होंने इस जाति व्यवस्था को मरण व्यवस्था कहा है। इससे हमारा समाज व देश कमजोर हो रहा है। सभी अपने स्वार्थ व हितों को सामने रखकर कार्य करते हैं जो कि उचित नहीं है। ईश्वर की आज्ञा व ज्ञान के आधार पर सामाजिक व्यवस्था होनी चाहिये। किसी के साथ भेदभाव, पक्षपात व अन्याय नहीं होना चाहिये। सबको उन्नति के समान अवसर मिलने चाहिये और समाज में ऐसी भावना उत्पन्न की जानी चाहिये जिससे

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org



# शिवरात्रि के पर्व पर मूलशङ्कर का विश्व को संदेश

● वेदमार्तण्ड डा. महावीर मीमांसक

शिवरात्रि के पर्व के अवसर पर प्रत्येक शिवजी में आस्था रखने वाला उस दिन व्रत आदि रखकर अपनी श्रद्धा का इजहार करता है, किन्तु मूलशङ्कर ने टङ्कारा में एक ही शिव का व्रत रखा और उसके बाद सच्चे शिव का दर्शन करने का आजीवन व्रत ले लिया। यही एक तर्क था जो मूलशङ्कर के मस्तिष्क में आया, यह तर्क सामान्यजनों के दिमाग में नहीं आता, केवल आर्षबुद्धि से सम्पन्न महापुरुषों में आता है। इसीलिये ऐसे तर्क को शास्त्रों में ऋषि कहा गया है, "तर्को वैऽसृषिः"। यह तर्क क्या था सुनियेः–

घटना बड़ी साधारण थी, कितने ही मनुष्यों के साथ घटती हैं और ऐसी घटना किसी भी मनुष्य के साथ घट सकती है। बालक मूलशङ्कर की शिवजी में निष्ठा अपने पिता श्री करसन जी तिवारी की भान्ति अत्यन्त अटूट थी अतः लगभग आठ वर्ष की अवस्था में बालक मूलशङ्कर ने फाल्गुन मास में पड़ने वाली शिवरात्रि अमावस्या के दिन शिवजी का व्रत रखने का संकल्प किया, क्योंकि मूलशङ्कर को बतलाया गया था कि जो व्यक्ति इस दिन शिवजी का व्रत रखकर शिवजी के मन्दिर में शिवजी की मूर्ति के सामने जागरण करता है, शिवजी उसे साक्षात् दर्शन देते हैं और उसे अपना सच्चा भक्त मानकर उस पर अपनी कृपा और प्रसाद की वर्षा करते हैं। अतः बालक मूलशङ्कर ने सोचा कि संसार के स्वामी शिवजी के दर्शन करके उसके साक्षात्कार करने का इससे अच्छा अवसर क्या हो सकता है? पिताजी से आशीर्वाद लेकर मूलशङ्कर ने व्रत रख लिया यद्यपि माताजी ने अनुमति नहीं दी, क्योंकि मां का हृदय बच्चे के प्रति बहुत कोमल और ममतामय होता है, वह बालक की भूख की पीड़ा को सहन नहीं कर सकती।

बालक मूलशङ्कर ने शिवरात्रि का व्रत रखा और शिवजी के दर्शन की लालसा में टङ्कारा नगरी (अपने जन्म स्थान) के शिव मंदिर में पहुंच गया, शिवजी की मूर्ति के सामने सबसे आगे आसन जमा कर बैठ गया। दिन बीत गया, शनैः शनैः रात्रि का अन्धकार वातावरण में छाने लगा। रात्रि छा गई, भक्त लोग एक एक करके निद्रा की गोद में जाने लगे, किन्तु ज्यों ज्यों रात बीतती, मूलशङ्कर की उत्सुकता बढ़ती जाती, आंखों की नींद उड़ चुकी थी, प्रतिक्षण आशा प्रबल होती जाती थी कि अब शिवजी प्रकट होंगे और मुझे (मूलशङ्कर को) सबसे पहले दर्शन देंगे। किन्तु आशा और प्रतीक्षा के सर्वथा विपरीत घटना हुई।

शिवजी तो नहीं आये, किन्तु मन्दिर के एक कोने से एक चूहा निकला, शिवजी की मूर्ति पर चढ़ा मूर्ति पर भक्तों द्वारा चढ़ाया हुआ नैवेद्य खाया। मूलशङ्कर चूहे की इन सारी हरकतों को बड़े ध्यान और आश्चर्य से देख रहा था। बालक मूलशङ्कर का आश्चर्य उस समय सीमा पार कर गया जब चूहे ने नैवेद्य खाने के बाद शिवजी की मूर्ति पर विष्ठा की और पेशाब किया, और फिर मन्दिर को उसी कोने में वापस अपने बिल में सब भक्तों को ठेंगा दिखाता हुआ घुस गया। बस यही वह क्षण था जब मूलशङ्कर के मस्तिष्क में वह आर्ष तर्क पैदा हुआ जिसने उस बालक के जीवन में आमूलचूल क्रान्ति ला दी और उसे सच्चे शिव की तलाश करने के मार्ग पर चलने के लिए भीष्म प्रतिज्ञा करने के लिये बाध्य किया। बालक के दिमाग में यह अकाट्य तर्क जागा कि जो शिव संसार का पैदा करने वाला, संसार को बनाये रखने वाला और संसार का संहार करने वाला है, वह शिव एक चूहे से अपनी रक्षा नहीं कर पाया तो वह संसार की क्या रक्षा करेगा? अतः यह सच्चा शिव नहीं हो सकता। संसार को बनाने, उसकी रक्षा करने और उसका संहार करने वाला शिव कोई और है, यह नहीं जो मेरे सामने मूर्ति के रूप में है। मैं उस सच्चे शिव की तलाश करके उस के दर्शन करने में ही अपना जीवन लगाऊंगा। यही वह तर्क था जिसे शास्त्रों में "तर्को वैऽसृषिः' कहा गया है, जिस तर्क के जागने मनुष्य ऋषि बन जाता है। बालक मूलशङ्कर इस तर्क के आधार पर यह व्रत लेकर मन्दिर से उसी समय अपने घर आ गया।

मूलशङ्कर के बाल्यकाल में एक और घटना इसी प्रकार की घटी जिसे देख उसने दूसरी भीष्म प्रतीज्ञा की और वह थी अपनी बहन और चाचा की मृत्यु। अपनी बहन और चाचा की अचानक प्रथम बार मृत्यु को देखकर मूलशङ्कर के मन में फिर यह प्रश्न पैदा हुआ कि क्या यह जीवन इतना नश्वर है, क्या सबको मृत्यु का शिकार अनिवार्यतः होना पड़ता है? मुझे इस मृत्यु पर विजय प्राप्त करके अमर होने का मार्ग ढूंढने में अपना जीवन लगाना है, यह दूसरा विचार था जो मूलशङ्कर के जीवन में भीष्म प्रतिज्ञा बना। मूलशङ्कर ने इन दोनों व्रतों को पूरा करने के लिये 22 वर्षों की नवयौवन की अवस्था में घर गृहस्थ का परित्याग किया, ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेकर ब्रह्मचारी चैतन्य बने, फिर संन्यास लेकर स्वामी दयानन्द सरस्वती बने और अन्त में सच्चे शिव की खोज करके, उसके प्रत्यक्ष आनन्द को अनुभव करते हुये और मृत्यु पर भी विजय प्राप्त करके जीवन मुक्त रहते हुये ऋषि दयानन्द बन गये।

विश्व के इतिहास में ऋषि दयानन्द से पहले दो और ऐसे महापुरुष हुये जिन्होंने इसी प्रकार की प्रतिज्ञा की और उन्हें पूरा करने के लिए अपना जीवन लगाया यद्यपि उनकी प्रतिज्ञा मृत्यु के रहस्य की जानकारी से अधिक सम्बन्धित थी।

प्रथम व्यक्ति हजारों लाखों वर्ष पहले उपनिषद् युग का एक बालक था जिसका नाम था नचिकेता। नचिकेता के पिता एक ऋषि थे जो अपने जीवन के अन्तिम पड़ाव वार्धक्य काल में 'सर्वमेध' याग करके अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति को समाज में दान करके त्याग करना चाहते थे। इसके लिये पिता ने 'सर्वमेध' याग की घोषणा कर दी। निश्चित दिन सर्वमेध याग हुआ, समाज के सभी गणमान्य ऋषि, मुनि, संन्यासी, विद्वान, पण्डित, राजा आदि निमन्त्रित व्यक्ति उपस्थित थे। याग की समाप्ति पर यज्ञ के महत्वपूर्ण अन्तिम कार्य दक्षिणा की बारी आई। किन्तु उस समय तक नचिकेता के पिता का मन पलट चुका था। ऋषि तुल्य पिता का मन लोभ के वशीभूत हो चुका था, अतः पिता ने मूल्यवान् सम्पत्ति के स्थान पर बूढ़ी, रुग्ण, दुग्धहीन और मरणासन्न आश्रम की गायों को दान में देना प्रारंभ कर दिया। नचिकेता अपने पिता की इस हीन मानसिकता को भाँप गया और पुत्र होने के नाते पिता को इस पापपूर्ण अपयश से बचाने का उपाय सोचने लगा। नचिकेता ने अपने कारण पिता को इस अपयशपूर्ण कार्य करते हुये देखकर अपने आप को भी पिता की सम्पत्ति के रूप में दाव लगा दिया और पिता से कहा कि पिता जी! मैं भी आपकी सम्पत्ति हूँ अतः बतलाइये, मुझे आप किसे दान में दे रहे हैं? पिता ने दो बार बालक को मूर्ख समझ कर बात टाल दी, किन्तु तीसरी बार बालक ने फिर यही सवाल किया तो पिता ने क्रोध में आकर कहा "मृत्यवे त्वां ददामि" (मैं तुझे मृत्यु को देता हूँ)। बालक नचिकेता ने पिता के वचन को पूरा करने के लिए मृत्यु की शरण ली। मृत्यु देवता ने तीन दिन तक अतिथि देव का भूखा प्यासा अपने द्वार पर देखकर, इस पाप से बचने के लिये प्रायश्चित के रूप में नचिकेता को तीन वर दिये। अन्तिम वर नचिकेता ने मांगा कि मुझे आप मृत्यु का रहस्य बतलाइये। यमदेव ने अनेक सांसारिक प्रलोभन देकर नचिकेता की परीक्षा के रूप में उसे टाल कर फंसाना चाहा किन्तु नचिकेता ने अपना आग्रह नहीं छोड़ा। अन्त में यमदेव ने उसे मृत्यु का रहस्य समझाया जिसमें आत्मज्ञान, परमात्मा ज्ञान आदि सारा अध्यात्मज्ञान आ गया। नचिकेता वह प्रथम बालक था जिसने मृत्यु की पहेली का ज्ञान प्राप्त करने के लिए अपना जीवन लगा दिया। कठोपनिषद् में यह सम्पूर्ण वृतान्त बड़े विस्तार से दे रखा है।

और दूसरे इतिहासपुरुष थे आज से लगभग 2500 वर्ष पहले कपिलवस्तु राजधानी के राजा शुद्धोदन के सुपुत्र राजकुमार सिद्धार्थ जो बाद में महात्मा बुद्ध के नाम से विख्यात हुये।

राजकुमार सिद्धार्थ बचपन से ही विरक्त वृत्ति के थे। राजकीय वातावरण, महल और सांसारिक आकर्षणों में उनका मन नहीं लगता था, उचाट रहते थे। पिता राजा शुद्धोदन ने नौकरों को आदेश दिया कि राजकुमार के सामने उदासीनता पैदा करने वाला कोई भी दृश्य नहीं आना चाहिये, सुन्दर और मनोहारी दृश्य ही सदा उपस्थित रहने चाहिये। फिर भी राजकुमार की वृत्ति नहीं बदली। वृद्धपुरुष, रोगी और मृतक व्यक्ति के शव को देखकर मन और भी अधिक विरक्त हो गया। भौतिक कष्टों, रोगों और मृत्यु को देखकर राजकुमार को दृढ़ निश्चय हो गया कि जीवन और संसार में दुःख, कष्ट, वियोग और मृत्यु अनिवार्य है अतः इनसे मुक्ति का उपाय ढूंढ़ना चाहिये। राजा पिता ने राजकुमार को दुनियादारी के बन्धनों में बांधने के लिये उसका विवाह सुन्दर राजकुमारी यशोधरा से करवा दिया। राजकुमार सांसारिक बंधनों में बंध गये। राहुल नामक सुन्दर बच्चा भी पैदा हुआ। किन्तु यह बन्धन कुछ समय के लिये था। राजकुमार के मन में फिर से वही विरक्ति के संस्कार प्रबल रूप से उजागर हुये। 30 वर्ष की भरी जवानी में राजकुमार रात्रि के समय पत्नी और शिशु पुत्र को छोड़कर राजमहल से निकल पड़े। सात वर्ष तक तपस्या की और सांसारिक दुःखों और मृत्यु से बचने का जो उपाय उन को मिला वह जनता को बताया और वे महात्मा बुद्ध के नाम से विख्यात हुये।

किन्तु मूलशङ्कर की खोज इससे बहुत गहरी और मौलिक थी। मूलशङ्कर (दयानन्द) के मन में सच्चे शिव को जानने का प्रश्न अपने जीवन की वास्तविक घटना से पैदा हुआ था जो राजकुमार सिद्धार्थ (महात्मा बुद्ध) के हृदय में कभी पैदा ही नहीं हुआ। अतः महात्मा बुद्ध ईश्वर के विषय में चुप रहे। मूलशङ्कर ने मृत्यु को साक्षात् अपनी प्यारी बहन और चाचा की

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org



# अतिथि सत्कार तथा उससे लाभ–अथर्ववेद

● शिव नारायण उपाध्याय

वैदिक वाङ्मय में अतिथि को देवता माना जाता है और इसलिए परिवार में जब कोई अतिथि आता है तो उसको बड़ा सम्मान दिया जाता है। उसके लिए भोजनादि की विशेष व्यवस्था की जाती है तथा इस बात का ध्यान रखा जाता है कि उसे किसी भी प्रकार से कोई असुविधा न होवे। परिवार के लोग उससे विभिन्न विषयों पर वार्तालाप कर उसके ज्ञान से अपने ज्ञान में बढ़ोत्तरी करते हैं।

अतिथि सत्कार के विषय में जैसा विस्तृत वर्णन अथर्ववेद में हुआ है वैसा वर्णन अन्यत्र कहीं भी मेरे पढ़ने में नहीं आया। अथर्व वेदकाण्ड 15 के सूक्त संख्या 10 से लेकर 18 तक इसी विषय पर चर्चा की गई है। कुल 102 मंत्रों में इसी विषय पर गहन विमर्श हुआ है। हम उसमें से कुछ मंत्रों को आधार बनाकर इस विषय पर पाठकों को कुछ बताने का प्रयत्न कर रहे हैं।

अथर्ववेद कहता है, जब ब्रह्मवेत्ता, सदाचारी, नित्य मिलने योग्यपुरुष जब किसी राजा से मिलने उसके घर पर आवे तब राजा यह विचार करे कि अतिथि मुझसे अधिक ज्ञानवान, सदाचारी और ब्रह्म को जानने वाला है उसका सत्कार करे। इससे राजा को कोई दोष नहीं लगता है और न ही राज्य के ऊपर भी कोई दोष आता है।[1]

यहां यह दोष लगने वाली बात इसलिए आई है कि सामान्यतया राजा अथवा सर्वोच्च शासक को राज्य का प्रथम पुरुष माना जाता है अतः वह सभी के द्वारा सम्मानित है तब वह अतिथि का सम्मान करने आगे क्यों आवे तथा राजा का अपमान सम्पूर्ण प्रजा का अपमान माना जाता है तो राजा की ऐसा कार्य क्यों करे क्यों, किसी व्यक्ति को सम्मानित कर प्रजा की निगाह में नीचे गिरे, परन्तु यह सोच ठीक नहीं है! उसका सम्मान करने से राजा छोटा नहीं हो जाता वरन् उसकी इस क्रिया से तो वह जनता में और अधिक लोकप्रिय हो जाता है।

राजा को ऐसे वेद वेत्ता लोगों को सत्कारित कर यह जानना चाहिए। इसलिए अथर्ववेद में कहा गया है, इस अतिथि सत्कार से निश्चित रूप से ब्रह्म ज्ञानी कुल और क्षत्रिय कुल दोनों की उन्नति होती है, दोनों ऊँचे उठते हैं। वे दोनों विचार विनिमय कर तय करें कि हमें सबकी उन्नति के लिए क्या करना चाहिए।[2] इस अतिथि सत्कार से निश्चय करके ब्रह्मज्ञानी कुल बड़े–बड़े प्राणियों के रक्षक गुण में ही प्रवेश करता है और उसी प्रकार अतिथि सत्कार से निश्चय करके क्षत्रिय कुल परम ऐश्वर्य में प्रवेश करता है। अतिथि ब्रह्मवेत्ता को इस प्रकार उपदेश करना चाहिए।[3]

ब्रह्मज्ञान तथा प्रजा पालन का ज्ञान यदि संयुक्त हो जाये तो निश्चित रूप से प्रजा का हर दृष्टि से विकास होता है और राजा भी सूर्य समान तेजस्वी बन जाता है। इस दृष्टिकोण को सम्मुख रख कर वेद का कथन है, यह अग्नि समान तेजस्वी निश्चय करके ब्रह्म ज्ञानी समूह की है और वह सूर्य समान प्रतापी क्षत्रिय समूह है।[4]

इसी प्रकार सामान्य गृहस्थ भी ब्रह्म वेत्ता अतिथि का सम्मान करके ब्रह्म वर्चसी बने। इस विषय पर वेद का उपदेश है, उस ब्रह्मज्ञानी समूह से मिलकर वह गृहस्थ ब्रह्मवर्चस्वी बन जाता है।[5]

अगले सूक्त में वर्णन है कि ब्रह्मवेत्ता अतिथि का सत्कार कैसे करें?

वेद उपदेश करता है कि, जब व्यापक परमात्मा को जानने वाला सद् व्रतधारी अतिथि किसी गृहस्थ के घर पर आवे तो गृह स्वामी स्वयं उठकर आगे जाकर अतिथि का सम्मान करते हुये, हे अतिथि देव! आप कहाँ से आ रहे हैं? रात्रि को कहां विराजमान थे? फिर उसको जल देकर कहे, यह जल लीजिए। हे व्रात्य आप हमें तृप्त करें और यह जल आपको तृप्त करे। हे व्रात्य। आपकी क्या आज्ञा है? जैसी आपकी आज्ञा होगी वैसा ही हम करेंगे। हे व्रात्य। जिसमें आपको प्रधानता मिले, आराम मिले वैसा ही हम करेंगे।[6]

फिर गृहस्थ लोग अतिथि को उनके प्रिय पदार्थ अर्पण करे। वेद कहता है, जब गृहस्थ उस अतिथि से नम्रतापूर्वक कहता है कि हे उत्तम व्रतधारी। जैसा भोजनादि पदार्थ आपको प्रिय लगे वैसा ही हम करना चाहते हैं। ऐसा कहकर वास्तव में वह गृहस्थ अपने प्रिय पदार्थ (ब्रह्म ज्ञान) को सुरक्षित कर लेता है। अतिथि की सेवा करने से गृहस्थ को अपना प्रिय पदार्थ प्राप्त हो जाता है और वह इष्ट मित्रों का भी प्रिय बन जाता है जो ऐसे अतिथि को जानता है।[7]

गृहस्थ को चाहिए कि आप्त विद्वान् अतिथि का अनेक प्रकार से सत्कार करके उन्नति की अपनी कामनाओं को पूरा करे। वेद का कथन है, उस गृहस्थ को लालसा आकर मिलती है। वह लालसा की निरन्तर पूर्ति में मग्न होता है जो गृहस्थ ऐसे विद्वान् को जानता है।[8]

जिस समय यदि आप कोई काम कर रहे हैं और अतिथि आ जावे तो आपका कर्तव्य है कि उस कार्य को स्थगित कर दें अथवा अतिथि की आज्ञा लेकर उसे पूर्ण करें।

वेद का उपदेश है कि, यदि व्यापक परमात्मा को जानता हुआ कोई व्रात्य (सत्य व्रतधारी अतिथि) उस समय पर आवे जब आप यज्ञ कर रहे हैं और ऊँची उठी अग्नि की लपटों के बीच हवन सामग्री की आहुति दे रहे हैं तब भी आप उठकर ब्रह्मज्ञानी अतिथि को सम्मान देते हुए विनम्रता से कहें, हे व्रात्य। कृपया आज्ञा दीजिए कि मैं हवन पूर्ण कर लूं।[9]

फिर यदि वह अतिथि आज्ञा देवे तो गृहस्थ हवन को पूर्ण करे, आज्ञा न देवे तो गृहस्थ यज्ञ भी न करे।[10] आगे वेद कहता है कि, जो गृहस्थ व्यापक परमात्मा को जानते हुए भी व्रात्य (सत्य व्रतधारी अतिथि) के द्वारा आज्ञा दिये जाने पर यज्ञ करता है, वह गृहस्थ पितरों (पालन कर्ता बड़े लोगों) के चलने योग्य मार्ग को अच्छी प्रकार जान लेता है और देवताओं के चलने योग्य मार्ग को भली प्रकार जान लेता है।[11] वह विद्वानों के बीच तनिक भी दोषी नहीं होता है। यह गृहस्थ का यज्ञ वास्तव में यज्ञ होता है।[12]

इस संसार में उस गृहस्थ की मर्यादा सब प्रकार शेष रह जाती है जो गृहस्थ व्यापक परमात्मा को जानते हुए व्रात्य (सत्य व्रतधारी अतिथि) की आज्ञा दिया हुआ होकर यज्ञ करता है।[13]

अगले मंत्रों में इसके विपरीत कार्य करने वाले गृहस्थ को कुमर्यादित मानकर कहा गया है कि उसके शुभ कार्य सिद्ध नहीं होते हैं। अतिथि के सत्कार के विषय में तो हमने पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर ली है परन्तु हमें अतिथि से क्या सीखना है इस पर विचार करते हैं। इस विषय पर वेद का कहना है, यदि व्यापक परमात्मा को जानने वाला सत्य व्रतधारी अतिथि गृहस्थ के यहां एक रात्रि ही निवास करे तो गृहस्थ उससे पृथ्वी पर जो दर्शनीय समाज है उन समाजों के विषय में अतिथि से निश्चित रूप से जानकारी लेवे। अतिथि सत्कार के फलस्वरूप गृहस्थ इस जानकारी प्राप्त करने को सुरक्षित कर लेता है।[14]

गृहस्थ का भाव यह रहे कि अतिथि अधिक से अधिक दिन उसके घर में निवास करे। यदि ऐसा हो जावे तो, यदि व्यापक ब्रह्म को जानता हुआ व्रात्य दूसरी रात्रि गृहस्थ के घर में बस जाता है तो गृहस्थ उससे अन्तरिक्ष में जो पवित्र लोक हैं उनके विषय में निश्चित रूप से प्रश्न करके अन्तरिक्ष लोकों का ज्ञान भी सुरक्षित कर लेवे।[15]

अधिक आग्रह करने पर अतिथि तीसरी रात्रि भी गृहस्थ के पास ठहर जावे तो गृहस्थ को उससे ज्योतिष विद्या का ज्ञान प्राप्त कर लेने का प्रयत्न करना चाहिए। अतिथि द्वारा ज्योतिष विद्या को फिर अपने लिए सुरक्षित भी कर लेना चाहिए।

वेद की आज्ञा का पालन करने वाला व्रात्य किसी भी गृहस्थ के पास तीन दिन से अधिक निवास नहीं करता।

गृहस्थ को चाहिए कि वह अतिथि के हर कार्य का सूक्ष्म निरीक्षण करता रहे। इससे उसे उत्तम सभ्यता का ज्ञान अनायास प्राप्त हो जायेगा। यदि कभी मनुष्यों को किसी बड़े विद्वान् का सान्निध्य लम्बे समय के लिए प्राप्त हो जावे तो वह उससे ब्रह्म विद्या, राज्य विद्या आदि अनेक शुभ विद्याएं प्राप्त कर अपनी उन्नति करे।

वेद में कहा गया है, यदि व्यापक परमात्मा को जानने वाला व्रात्य कई रात्रियों के लिए किसी गृहस्थ के घर में निवास करता है तो निश्चय करके जो असंख्य पवित्र लोक हैं उनके विषय में गृहस्थ अतिथि से ज्ञान प्राप्त कर उसे सुरक्षित रक्खे।[16]

ब्रह्मज्ञानी विद्वान् अतिथि अपने लगातार सदुपदेशों, सत्कर्मों और सत् पराक्रमों से लोगों को बलवान बनाकर संसार की रक्षा करता है।

फिर आगे कई मंत्रों में बताया गया है कि व्रात्य (सत्य व्रतधारी अतिथि) हमें किस प्रकार रक्षित कर देता है। व्रात्य हमको नाना प्रकार की औषधियों के विषय में भी ज्ञान देता है।

उसका देशाटन वेद विद्या के प्रचार के लिए ही होता है। वह गृहस्थ को

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org



# काकोरी केस का जांबाज़ सिपहसालार अशफ़ाकउल्ला खाँ

● डॉ. सहदेव वर्मा

जिन लोगों ने भारतीय क्रान्तिकारियों का इतिहास पढ़ा या सुना है वे काकोरी केस के नाम से अवश्य परिचित होंगे। उसमें भी दो नाम सर्वोपरि हैं, एक तो अमर शहीद पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' तथा दूसरा अशफाकउल्ला खाँ।

यह देश का दुर्भाग्य ही है, कि भारत के स्वतंत्र होने पर भी उसके कर्णधारों ने उन वीर बलिदानियों की सदा उपेक्षा ही की है जिनकी पूजा होनी चाहिए थी। उन्हीं में से एक क्रान्तिकारी ने लिखा था:–

**'शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले। वतन पर मिटने वालों का यही बाकी निशाँ होगा।'**

हम यहाँ एक ऐसे जांबाज़ क्रान्तिकारी की चर्चा करेंगे जिसने हँसते–हँसते गले में फाँसी का फन्दा डालकर 'भारत माता की जय' तथा 'वन्दे मातरम्' के नारे के साथ अपनी इहलीला-समाप्त की।

यह अमर बलिदानी उस समय भारतीय क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित हुआ जब मुसलमान लोग क्रान्तिकारियों से अलगाव बनाये रखने में ही अपना भला समझते थे।

जिस समय पं. रामप्रसाद बिस्मिल शाहजहाँपुर के एक स्कूल में पढ़ ही रहे थे, वहीं पर अशफ़ाकउल्ला ने सर्वप्रथम उनसे भेंट की, क्योंकि अशफ़ाक को यह अहसास हो गया था कि यही व्यक्ति है जो देश की समस्याओं के सम्बन्ध में जानकारी रखता है। इसलिए इससे निकटता प्राप्त करनी चाहिए। अशफाक के मन में देश के लिए कुछ क्रान्तिकारी कार्य करने की भावना भीतर ही भीतर तरंगित हो रही थी।

इधर रामप्रसाद 'बिस्मिल' के मन में यह बात खटक रही थी, कि यह मुसलमान लड़का मुझसे क्यों बात करना चाहता है? क्योंकि अशफ़ाक ने 'बिस्मिल' जी से मैनपुरी षड्यंत्र के बारे जिज्ञासा प्रकट की थी। पाठकों को बता दें कि मैनपुरी में क्रान्तिकारियों ने एक साथी पर यह दबाव डाला था कि वह अपने किसी धनी परिवार के घर डाका डलवाये, जिससे कुछ धन की प्राप्ति हो, जब उस साथी ने कुछ उत्तर न दिया तो साथियों के लीडर ने लिखित में उसे धमकी दी। वह पुलिस के पास जा पहुँचा। तब पुलिस चौकन्नी हुई। मैनपुरी में धरपकड़ हुई और कई भेद खुले, केस चले और सजाएँ भी हुईं।

रामप्रसाद 'बिस्मिल' काफी समय तक अशफ़ाकउल्ला की बातों को सुनकर भी प्रायः उसकी उपेक्षा ही करते रहे। कारण वही कि हिन्दू मुसलमानों में प्रायः अविश्वास की भावना ही आड़े आती थी। स्वामी दयानन्द के शुद्धि आन्दोलन से यह भ्रम और अधिक फैल गया था, जो सर्वथा निराधार ही था। परन्तु अशफ़ाकउल्ला तो सच्चे मन से देश की सेवा करना चाहते थे। इसीलिये अशफ़ाकउल्ला ने मन ही मन निश्चय किया था कि जब तक मैं श्री रामप्रसाद बिस्मिल के हृदय में पक्का विश्वास पैदा न कर लूँगा तब तक अपने कदम पीछे नहीं हटाऊँगा।

अंत में अशफ़ाकउल्ला की विजय हुई, क्योंकि श्री 'बिस्मिल' जी ने सब ओर से विश्वस्त सूत्रों से और जहाँ से भी जैसे भी संभव था जाँच परख कर ली तो उन्हें ये जानकर बड़ा खेद हुआ कि 'मैंने एक सच्चे देश भक्त नवयुवक पर व्यर्थ ही इतना अविश्वास किया।' जब यह सब जानकारी श्री बिस्मिल जी को हुई तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। कुछ ही समय में अशफ़ाकउल्ला बिस्मिल जी के छोटे भाई के समान ही प्रिय हो गये, परन्तु अशफ़ाक को इतने से ही सन्तोष न हुआ, वह तो उनके साथ पूर्ण समानता के अधिकार चाहते थे। अन्त में अत्यन्त शीघ्र ही अशफ़ाकउल्ला की गणना बिस्मिल जी के अभिन्न मित्र की श्रेणी में होने लगी।

उसके बाद तो सबको यह जानकर आश्चर्य होता था कि एक पक्के आर्य समाजी और एक पक्के मुसलमान कैसे एक हो गये? क्योंकि आर्य समाजी तो मुसलमानों की शुद्धि करते थे। उन दिनों बिस्मिल जी का निवास स्थान भी आर्य समाज में ही था, किन्तु अशफ़ाकउल्ला को इस बात की तनिक भी चिन्ता नहीं थी। उनका समाज मन्दिर में ही नित्य आना जाना होता था। श्री बिस्मिल के साथी एक मुसलमान के साथ इतनी घनिष्ठता होने के कारण उससे लगभग घृणा सी करने लगे थे, परन्तु इसकी चिन्ता न तो श्री रामप्रसाद बिस्मिल को ही थी और न परवाह अशफ़ाकउल्ला ही करते थे। आश्चर्य तो इस बात का है कि हिन्दू–मुस्लिम झगड़ा होने पर भी अशफ़ाकउल्ला को प्रायः सभी लोग विशेष रूप से मुसलमान लोग खुले आम गालियाँ देते थे, भला बुरा कहने के साथ ही काफ़िर कहकर पुकारते थे, परन्तु अशफ़ाकउल्ला इसकी तनिक भी परवाह नहीं करते थे। वे सदा हिन्दू–मुस्लिम एकता के पक्षधर रहे।

जब रामप्रसाद बिस्मिल कोई लेख या पुस्तक हिन्दी में लिखते तो अशफ़ाक सदा यही कहते कि उर्दू में क्यों नहीं लिखते, जिससे मुसलमान भी इन भावों को पढ़ और समझ सकें। अशफ़ाक ने यह देखकर कि स्वदेश–भक्ति की अधिकांश पुस्तकें हिन्दी में ही हैं, तो उन्होंने हिन्दी का अध्ययन कर अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। इसी से उनकी देश–भक्ति की भावना प्रकट होती है। उनके मन में सदा यह भावना खटकती रही कि मुसलमान हिन्दुओं के साथ मिलकर काम क्यों नहीं करते? अशफ़ाक जब आपसी बातचीत में हिन्दी शब्दों को प्रयोग करते तो उनके घर वालों तथा अन्य मुसलमानों को आश्चर्य होता था। उनकी इस प्रवृति को देखकर उन लोगों को यह सन्देह होने लगता था कि (अशफ़ाकउल्ला) कहीं इस्लाम को त्याग कर अपनी शुद्धि न करा ले, परन्तु लोगों की इस बात को सुनकर 'बिस्मिल' जी कहते थे, कि जो व्यक्ति स्वयं शुद्ध है उसकी शुद्धि कैसी?

कई बार बिस्मिल जी के मित्रों में भी दबे स्वर में यह चर्चा चलती थी कि मुसलमान पर आवश्यकता से अधिक विश्वास करके धोखा न खा जाना, जिससे बाद में पछताना पड़े, क्योंकि तुम पहले भी अपनों से धोखा खा चुके हो, परन्तु बिस्मिल जी ने कभी इन बातों पर ध्यान नहीं दिया। श्री बिस्मिल तथा अशफ़ाक में तो ऐसी प्रगाढ़ मित्रता हुई जिसे 'दो तन एक मन' कहा जा सकता है।

पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' के मन में तो जैसे हिन्दू–मुसलमान का भेद ही समाप्त हो चुका था। इसी दृढ़ मित्रता के आधार पर अशफ़ाकउल्ला भी श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल' को केवल 'राम' नाम से ही पुकारा करते थे।

एक ऐसा समय भी आया जब अशफ़ाकउल्ला को 'Palpitation of heart' (हृदय कम्पन) का आघात हुआ तो बेहोशी में उनके मुँह से 'हाय राम'–'हाय राम' ही निकल रहा था। पास बैठे तथा खड़े घर वालों और पड़ोसियों को बड़ा ही आश्चर्य था कि यह 'हाय राम'–'हाय राम' की ही रट लगा रहा है। वे कहते थे कि बेटा 'अल्ला–अल्लाह' कहो। पर उसे तो एक ही रट थी। यह देख और सुनकर घर वालों ने भी माथा पीट लिया। संयोग की बात कि तभी उसका एक मित्र वहाँ आया, जो 'हाय राम' के भेद को जानता था। तब वहाँ फ़ौरन ही रामप्रसाद 'बिस्मिल' को बुलवाया। उन्होंने धीरे से अशफ़ाक के बिल्कुल निकट जाकर कहा– 'अशफ़ाक! मैं आ गया। मैं रामप्रसाद तो तुम्हारे पास ही बैठा हूँ।' बिस्मिल ने दो–तीन बार धीरे–धीरे यही कहा और धीरे–धीरे अशफ़ाकउल्ला के मस्तक को प्यार से सहलाया, तब उसने आँखें खोलीं और वह हल्के से मुस्कराया। कुछ आराम भी महसूस हुआ। तब सब लोग राम! राम! के भेद को समझे।

इस प्रेम तथा घनिष्ठ मित्रता का परिणाम हुआ कि अशफ़ाकउल्ला भी कट्टर क्रांतिकारी और अंग्रेजों के घोर विरोधी बन गये। जब वे पूर्णरूप से बिस्मिल जी के रंग में रंग गये तो अधिकांश लोगों को आश्चर्य होता था कि कैसे एक मुसलमान एक कट्टर आर्यसमाजी का अभिन्न मित्र बन गया, साथ ही 'क्रान्तिकारी दल' का प्रतिष्ठित और अत्यन्त विश्वसनीय सदस्य भी बन गया। एक ऐसे मुसलमान नवयुवक को अपना बनाकर देश भक्ति के रंग में रंग कर बलिदान के लिए तैयार करना उस समय कोई मामूली बात नहीं थी जब कि उसके परिवार तथा नाते रिश्तेदार सब उसे उस रास्ते पर जाने से बराबर रोकते रहे, परन्तु वाह रे अशफ़ाकउल्ला! तैने भारत माता की स्वतंत्रता की सौगन्ध मन ही मन खाई, तो वह फाँसी के फन्दे पर भी न टूट सकी। देशभक्त हो तो ऐसा! माता का सपूत हो तो ऐसा!! सच्चा बलिदानी हो तो ऐसा!!!

अशफ़ाकउल्ला मन से ही नहीं तन से भी बलशाली थे। जिस समय काकोरी के निकट रेलगाड़ी में सरकारी खजाने से भरे लोहे के सन्दूक को हथौड़े तथा छेनियों से तोड़ने की कोशिश हो रही थी, और वह टूट ही नहीं रहा था तब अशफ़ाक ने ही उसे उठाकर रेल गाड़ी के डब्बे से नीचे फेंका था, और वहीं पर उसे हथौड़े तथा कुल्हाड़ियों से तोड़ा था।

काकोरी की इस डकैती से देश भर में सनसनी फैल गई। जब चारों ओर खोज शुरू हुई तो दो–तीन नोट शाहजहाँपुर में ऐसे मिल गये, जिनका नम्बर काकोरी की डकैती से था। इसके अतिरिक्त क्रान्तिकारियों के एक–दो साथी सरकारी गवाह बन गये। फिर क्या था? शाहजहाँपुर में धर पकड़ शुरू हो गई। रामप्रसाद बिस्मिल तथा अशफ़ाकउल्ला दोनों गिरफ्तार हो गये। अशफ़ाक के साथ पुलिस काफ़ी सख्ती से पेश आई, परन्तु क्या मजाल कि 'उस शेर के बच्चे के मुँह से गिरफ्तारी से लेकर फाँसी के फन्दे तक एक भी कच्ची बात बाहर आई हो।' यहाँ तक कि जब श्री बिस्मिल ने सरकार से दया प्रार्थना की तो अशफ़ाक ने कहा कि खुदा वन्द करीम के अलावा

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

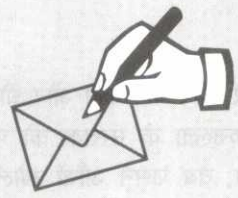

# पत्र/कविता

## राजनीति के नाम पर देश और समाज से खिलवाड़

धर्म निरपेक्षता, प्रजातंत्र, अभिव्यक्ति की आजादी। ऐसे में यदि आप धर्म, संस्कृति, सभ्यता ओर अपनी पहचान की बात करते हैं। तो यह सब चीज आपको स्वयं ही करनी पड़ेंगी। आपको स्वयं ही अपने व्यक्तित्व को अमर शहीद राम प्रसाद बिस्मिल की तरह से इस प्रकार का बनाना पड़ेगा कि एक नहीं हजार-हजार अश्फाक उल्ला खां वारसी जुड़ते चले जायें। कोई उनकों फांसी पर भी लटकाये तो वे खुशी-खुशी लटक जाये परन्तु आपका साथ न छोड़ें। छोड़ने की बात तो क्या छोड़ने को राजी तक न हों। आर्य समाज के इतिहास में ऐसे व्यक्तित्व के धनी बहुत हुए हैं जो मुसलमानों और इसाइयों के बीच गये। काम किया। उनमें स्वयं नहीं रड़े और रुले बल्कि उनको इस बात का कायल बनाया कि वे स्वयं को आर्य बनायें। आज धर्मात्तंरण की बात एक बार फिर से सुर्खियों में है। राजनीति के नाम पर देश और समाज से खिलवाड़ करने वाले नेताओं के चलते हालत यह हो गई है कि इनको यह मुहम्मद गौरी नहीं दिखाई दिया जो भारत से सोलह वार मिटा और अन्त में धर्म का उपयोग कर एक बार फिर आया सेना के आगे गाय लगाई और उनकी आड़ से पृथ्वीराज चौहान को बाँधकर अपने देश ले गया। पाकिस्तान आज धर्म की आड़ ले रहा है और इस्लाम गोल टोपी, हजरत मुहम्मद, कुरान और मुसलमान सब कुछ प्रयोग करके भारत पर प्रन्न और खुले आक्रमण कर रहा है। हमारे स्वार्थी नेता नामधारी लोग कह रहे है – नहीं, नाव पाकिस्तान की नही थीं।

पं. भू देव साहित्य चार्य
महायेशक
9213107453

# बोध-प्रदीप

मत भटक मनुज अँधियारे में स्वागत करता उजियारा है।
'सत्यार्थ प्रकाश' का प्रदीप, ऋषि दयानन्द ने वारा है।।
सत्यार्थ प्रकाशक मार्तण्ड, चौदह लोकों में जाता है।
जग एक नीड़ के मनुज एक श्रुति समुल्लास बिखराता है।
सच्चिदानन्द परमेश्वर का, सच्चा स्वरूप बतलाता है।
नित पञ्च यज्ञ आयोजन से, परिवार तीर्थ बन जाता है।
क्यों तकते फिरते चिनगारी, पास तुम्हारे श्रुति तारा है।
सत्यार्थ प्रकाश का प्रदीप, ऋषि दयानन्द ने वारा है।।

महाकुम्भ में महाघोष कर, पाखण्ड खण्डिनी फहराई।
अघ आडम्बर पीड़ा हरकर, वैदिक रवि की राह दिखाई।
नर बाल युवा सधवा विधवा थी, सब पर ही की करुणाई।
यम नियम साधना सेवा की सबको ही दे दी शरणाई।
श्रुति रोधक मत पन्थ सभी को, शास्त्रार्थों में ललकारा है।
सत्यार्थ प्रकाश का प्रदीप, ऋषि दयानन्द ने वारा है।।

खेद भेद की ओर न जाओ, वेदों की ओर लौट आओ।
क्षण छोड़ो साथ दानवों का, देवों की ओर लौट आओ।
आतंकवाद का कर विनाश, संप्रीतिवाद को अपनाओ।
मर रही जहाँ मानवता हो, प्राणों से उसको दुलराओ।
दोही ने जिसको दुत्कारा, श्रुति स्नेही ने पुचकारा है।
सत्यार्थ प्रकाश का प्रदीप, ऋषि दयानन्द ने वारा है।।

पादप पशुओं पर दया करो, वे भी कल्याणी प्राणी है।
देते निज पोष मनुजता को, दु:ख सुख में प्रिय परित्राणी है।
गो करूणानिधि का ध्यान करो, महर्षि की अदभुत वाणी हैं।
मत मारो मूक प्राणियों को, वे सहयोगी निर्माणी हैं।
हिंसक स्वभाव का हर मानव, मानवता का हत्यारा है।
सत्यार्थ प्रकाश का प्रदीप, ऋषि दयानन्द ने वारा है।

बेटा-बेटी भेद भावना, लज्जित करती मानवता को।
भ्रूण हनन दहेज बलात्कार, इंगित करते दानवता को।
प्रभु ने निज़ पुत्र बना भेजा, समझो अपनी उत्तमता को।
अपनी अवलोकन प्रतिष्ठा लो, नर जीवन की उज्ज्वलता को।
मानव मानव सभी सहोदर, वसुधैव कुटुम्ब तुम्हारा है।
सत्यार्थ प्रकाश का प्रदीप, ऋषि दयानन्द ने वारा है।

हर बाल-बालिका का पालन, अभिरक्षा हो उनकी समान।
सुविधा साधन के साथ-साथ, सब शिक्षा हो उनकी समान।
प्राप्त दीक्षा-दक्षतानुसार, निज राष्ट्र -तंत्र में मिले मान।
कैलाश-मलाला नोबेल जय, यह दयानन्द का कीर्तिगान
निज प्राणों पर खेल जिन्होंने, ऋषि का नारा हुंकारा है।
सत्यार्थ प्रकाश का प्रदीप, ऋषि दयानन्द ने वारा है।।

वेदों के भ्रमित भाष्यों का, अनुकूलन करके दिखलाया।
भारत मां के स्वातन्त्र्य हेतु, डंका स्वराज्य का बजवाया।
वेद विश्व की बने धरोहर, राष्ट्र संघ में योग समाया।
भारत विश्व गुरू पद पाये, भूमिका भाव यह उग आया।
भारत माँ के यश गुंजन का, उद्घोष स्रोत टंकारा है।
सत्यार्थ प्रकाश का प्रदीप, ऋषि दयानन्द ने वारा है।।

देवनारायण भारद्वाज

# वेदों को राष्ट्रीय ग्रंथ घोषित किया जाए

देश में विगत दिनों गीता को राष्ट्रीय ग्रंथ घोषित करने की चर्चा चल रही थी। मेरी दृष्टि में गीता को नहीं बल्कि वेद को या कम से कम ऋग्वेद को राष्ट्रीय ग्रंथ घोषित किया जाना उचित होगा। इसके पक्ष में निम्नलिखित तर्क हैं (1) पौराणिक मान्यताओं के अनुसार जहाँ वेद सृष्टि के आदि में ब्रह्मा के चारों मुख से चारों वेद एक ही बार निःसृत हुए, वैदिक मान्यता के अनुसार भी वेद सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा के द्वारा चार ऋषियों-अग्नि, वायु , आदित्य एवं अंगिरा पर प्रकट किए गए। तरीके को छोड़कर बाकी दोनों में सभी समान हैं। (2) संयुक्त राष्ट्र संघ ने ऋग्वेद को विश्व धरोहर' के रूप में स्वीकार कर लिया है। (3) विश्व के इतिहासकारों के बहुमत ने ऋग्वेद को विश्व -पुस्तकालय की प्राचीनतम पुस्तक के रूप में मान लिया है। (4) गीता जहाँ भारत के पाँच हतार वर्ष की अत्यल्प अवधि का प्रतिनिधित्व करते है, वहीं वेद अथवा ऋग्वेद भारत के करोड़ों वर्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं। (5) भारत की संसद ने संसद के मुख्य द्वार पर ऋग्वेद के 'एकं सत् विप्राः बहुधा वदन्ति' मंत्र को लिखकर पहले ही ऋग्वेद की राष्ट्रीयता पर मुहर लगा दी है। (6) जहां अन्य ग्रंथ महजहबी संदेश देते हैं।, वही ऋवेद मनुष्य को सच्चा मनुष्य बनकर दिव्य मनुष्य उत्पन्न करने का संदेश देता है- 'मनुर्भव जनया दैव्य जनम्'। विश्व विख्यात वैज्ञानिक आइन्स्टाइन से जब संसार को सुखी बनाने के उपाय पूछे गए तो उन्होंने वैज्ञानिक उन्नति की बात न कहकर यही कहा था संसार को सुखी बनाने के लिए अच्छे मनुष्य उत्पन्न करने की जरूरत है, जो शब्दान्तर से ऋग्वेद के उपरोक्त बात की पुनरावृति मात्र है। अतः देश के गौरव के साथ यह सर्वथा उचित होगा कि वेद या ऋग्वेद को भारत का राष्ट्रीय ग्रंथ घोषित किया जाए

सूर्य देव चौधरी
झारखंड राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, राँची।
09470587322

**********

thearyasamaj.org



☞ पृष्ठ 06 का शेष

# महर्षि दयानन्द के दो...

सब दूसरों की उन्नति में ही अपनी उन्नति समझें जिसका उदाहरण महर्षि दयानन्द व इसकी प्रथम पीढ़ी के लोगों का जीवन, आचरण व व्यवहार था। जन्मना जाति की प्रथा की समाप्ति के साथ विश्व से काले व गोरे अर्थात श्वेत–अश्वेत का भेद, अगड़े–पिछड़े का भेद, छोटे–बड़े व ऊंच–नीच की भावना भी खत्म होनी चाहिये। इसके लिए आर्य समाज को कमर कसनी चाहिये। महर्षि दयानन्द ने अपने समय में केवल एकांगी क्रान्ति नहीं की अपितु सर्वांगीण क्रान्ति की थी। उनके सभी विषयों पर विचार उनके सत्यार्थ प्रकाश व वेद भाष्य आदि ग्रन्थों में विद्यमान हैं। इनको अपनाने से ही देश, समाज व विश्व का कल्याण होगा। अतः समाज को नया वैज्ञानिक रूप देने के लिए जिसमें अन्य सभी सुधार के कार्यों के साथ उपर्युक्त दोनों सुधारों को भी मुख्य स्थान प्राप्त हो, पर ध्यान केन्द्रित करने व उसे गति देने की आवश्यकता है। हमारी नई पीढ़ी कुछ सीमा तक इस दिशा में आगे बढ़ रही है परन्तु वह अनेक मुख्य व आवश्यक बातों की उपेक्षा भी कर रही है। अतः वेद व वेदों के विचार आज सर्वाधिक प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण हो गये हैं जिनका मार्गदर्शन लेकर वेदानुरूप उन्नत व आधुनिक समाज का निर्माण किया जाना चाहिये।

196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोन नं. 09412985121

☞ पृष्ठ 07 का शेष

# शिवरात्रि के पर्व पर ...

होते हुये देखा था, जो राजकुमार सिद्धार्थ का अनुभव नहीं बना। यद्यपि महापुरुषों की तुलना करनी नहीं चाहिये किन्तु वास्तविकता जानने के लिये मूलशङ्कर का वैराग्य अडिग और दृढ़ भूमि पर स्थिर था जबकि सिद्धार्थ का वैराग्य कुछ समय के लिये पूरी तरह डगमगा गया और वे सांसारिक आकर्षण से अभिभूत हो गये, जबकि यमदेव के द्वारा भौतिक आकर्षण उपस्थित करने पर भी नचिकेता नहीं डगमगाये थे।

मूलशङ्कर अर्थात् ऋषि दयानन्द सभी आस्तिक लोगों के दिमाग में यह प्रश्न खड़ा करना चाहते हैं कि जब सभी लोगों के लिये एक ही भूमि बनाई है जिसका उपयोग सभी करते हैं, जब सब के लिये एक ही पानी है जिसको सभी पीते हैं, जब वायु सब मतों के मानने वालों के लिये एक ही बनाई है जिसमें सभी श्वास लेते हैं तथा जब अग्नि सभी के लिए एक ही है, ऐसा नहीं कि हिन्दू के लिये भूमि, जल, वायु, अग्नि अलग बनाई हो, मुसलमान के लिये अलग, ईसाई के लिये अलग, तथा अन्य मत को मानने वालों के लिये यह सृष्टि अलग बनाई हो। जब ऐसी बात प्रत्यक्ष, स्पष्ट तथा सर्वविदित है तो इस विश्व की सृष्टि तथा सृष्टि के पदार्थों को बनाने वाला भी एक ही होना चाहिये, इनको बनाने वाली शक्ति भी अलग अलग नहीं हो सकती, जिस के लिए वेद कहता है "एकं सद्विप्राः बहुधा वदन्ति," भले ही उसके नाम अलग अलग भाषाओं में अलग अलग हों, इससे वह बनाने वाला अलग अलग नहीं हो सकता। अतः यह परम आवश्यक और अनिवार्य हो जाता है कि उस एक शक्ति (ईश्वर) के सच्चे और वास्तविक स्वरूप का निर्धारण और निश्चय किया जाये। ऋषि दयानन्द विश्व को इस अकाट्य तर्क का सन्देश देना चाहते हैं कि सामान्य व्यक्ति भी बाजार में जब कोई वस्तु खरीदने निकलता है तो वह दस दुकानों पर चक्कर काटकर यह परखता है कि कौन सी दुकान पर अमुक वस्तु असली और मौलिक है, कहीं नकली या डुप्लीकेट तो नहीं। फिर ईश्वर के विषय में वह यह तर्क क्यों नहीं लगाता कि कौन सा शिव (ईश्वर) सच्चा और कौन सा नकली है?

बस ऋषि दयानन्द यही तर्क और प्रश्न प्रत्येक व्यक्ति के दिमाग में खड़ा करना चाहते हैं। यही सन्देश मूलशङ्कर विश्व को देना चाहते हैं। यह प्रश्न और तर्क यदि मानव के मस्तिष्क में उभर जाये तो फिर प्रत्येक व्यक्ति मूलशङ्कर की भान्ति सच्चे शिव की खोज में निकल पड़ेगा और सच्चे शिव को प्राप्त करके समूचा मानव समाज सुख, शान्ति और आनन्द का जीवन बितायेगा तथा विश्व में भाईचारा बन्धुत्व, और मित्रता की स्थापना स्वतः हो जायेगी। सच्चे और एक ईश्वर की मान्यता से विश्व में ईर्ष्या, द्वेष, कलह, युद्ध, रक्तपात और आतंकवाद स्वतः समाप्त हो जायेंगे।

(भूतपूर्व संस्थापक एवं अध्यक्ष संस्कृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, हरियाणा)
संपर्क:– ए–3/11, पश्चिम विहार, नई दिल्ली–110063
मो. 9811960640

☞ पृष्ठ 08 का शेष

# अतिथि सत्कार तथा उससे..

शरीर विज्ञान के विषय में भी बताता है। वह शरीर के भीतर जाने वाले सात प्राण और शरीर से बाहर निकलने वाले सात अपान और सम्पूर्ण शरीर में फैले हुये सात व्यान के विषय में भी गृहस्थ को ज्ञान देता है।[17]

वेद में इनको एक एक कर बताया भी गया है परन्तु यहां विषय के विस्तार के भय से उसे छोड़ देते हैं। ऐसे ब्रह्म ज्ञानी व्रात्य का सामर्थ्य भी बहुत अधिक होता है। वेद में उसके सामर्थ्य का भी पर्याप्त वर्णन हुआ है। व्रात्य लगातार उन्नति करता है। वेद में कहा गया है, व्रात्य (सत्य व्रतधारी अतिथि) दिन के साथ सामने जाने वाला और रात्रि के साथ आगे को चलने वाला है। व्रात्य को गृहस्थ का नमस्कार होवे।[18]

अब हम पाठक को थकाना न चाह कर विषय को विराम देते हैं। इति।

**सन्दर्भित मन्त्र**

1. तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्यो राज्ञोऽतिथि गृहानागच्छेत्।।
   श्रेयांसमेनमात्मनों मानयेत् तथा क्षत्राय ना वृश्चते तथा राष्ट्राय ना वृश्यते।। अथर्व. 15.10 (1,2)
2. अतो वै ब्रह्म च क्षत्रं चोदतिष्ठतां ते अब्रूतां कं प्र विशाषेति।। अथर्व. 15.10.3
3. अतो वै बृहस्पतिमेव ब्रह्म मा विशत्विन्द्रं क्षत्रं तथा वा इति।। अथर्व. 15.10.4
4. अयं वा उ अग्निर्ब्रह्मासावादित्यः क्षत्रम्।। अथर्व. 15.10.7
5. ऐन ब्रह्म गच्छति ब्रह्म वर्चसी भवती। अथर्व. 15.10.8
6. स्वयमेनम्युदेत्य ब्रूयाद व्रात्य काऽवात्सीर्व्रात्योदकं व्रात्य तर्पयन्तु व्रात्य यथा ते प्रियं तथास्तु व्रात्य
   यथा ते दशस्तथास्तु व्रात्य यथा ते निकामस्तथास्तिवति।। अथर्व. 15.11.2
7. यदेनमाह व्रात्य यथा ते प्रियं तथास्त्विति प्रिय मेव तेना व रून्द्धे।
   ऐनं प्रियां गच्छति प्रियः प्रियस्य भवति य एवं वेद।। अथर्व. 15.11.(6,7)
8. एनं निकामो गच्छति निकामे निकामस्य भवति य एवं वेद।। अथर्व. 15.11.11
9. तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्य उद्धृतेष्वग्निष्वधिश्रतेऽग्निहोत्रेऽतिथिर्गृ हानागच्छेत्।। अथर्व. 15.12.1
10. स्वयमेनमभ्युदेत्य ब्रूयाद व्रात्याति सृज होष्यामीति।। अथर्व. 15.12.2
11. स य एवं विदुषा व्रात्येनाति सृष्टो जुहोति।
    प्र पितृ याणं पन्थां जानाति प्र देवयानम्।। अथर्व. 15.12.(4,5)
12. न देवेष्वा वृश्यते हुतमस्य भवति।। अथर्व. 15.12.6
13. पर्यस्यास्मिंल्लोक आयतनं शिष्यते य एवं विदुषा।
    व्रात्येनातिसृष्टो जुहोति।। अथर्व. 15.12.7
14. तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्य एकां रात्रिमतिथि गृहे वसति।
    ये पृथिव्यां पुण्या लोकास्तानेव तेनावरून्द्धे।। अथर्व. 15.13.(1,2)
15. तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्यो द्वितीया रात्रिमतिथिगृहे वसति।
    ये उन्तरिक्षे पुण्या लोकास्तानेव तेनाव रून्द्धे।। अथर्व. 15.13.(3,4)
16. तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्योऽपरिमिता रात्रीरतिथिगृहे वसति।
    य एवा परिमिताः पुण्या लोकास्तानेव तेनाव रून्द्ध।। अथर्व. 15.13.(9,10)
17. सप्त प्राणाः सप्तापानाः सप्त व्यानाः।। अथर्व. 15.15.2
18. अह्ना प्रत्यङ् व्रात्यो यात्र्या प्राङ्नमो व्रात्याय।। अथर्व. 15.18.5

73, शास्त्री नगर दादाबाड़ी
कोटा (राजस्थान) 324009

☞ पृष्ठ 09 का शेष

# काकोरी केस का जांबाज़ ...

किसी दूसरे से दया की प्रार्थना न करनी चाहिए।

अशफ़ाकउल्ला के सम्बन्ध में श्री रामप्रसाद बिस्मिल ने अन्त समय में फाँसी की काल कोठरी में बैठकर जहाँ अपने क्रान्तिकारी अनुभव लिखे हैं, उसी जेल डायरी से उनके ये उद्गार देखिए:– 'प्रियवर, जैसे तुम शारीरिक बलशाली थे, वैसे ही मानसिक वीर, तथा आत्मा से उच्च सिद्ध हुए। इसी के परिणाम स्वरूप अदालत ने तुमको मेरा लेफ्टिनेन्ट ठहराया और जज ने तुम्हारे गले में जय–माला (फाँसी की रस्सी) पहना दी। प्यारे भाई! तुम्हें यह जानकर सन्तोष होगा कि जिसने अपने माता–पिता की धन सम्पत्ति को देश सेवा के अर्पण करके उन्हें भिखारी बना दिया तथा अपने सहोदर को भी देश–सेवा की भेंट चढ़ा दिया, जिसने अपना तन–मन–धन मातृ–सेवा में अर्पण करके अपना अन्तिम बलिदान भी दे दिया। उसने अपने प्रिय सखा अशफ़ाक को भी उसी मातृ भूमि की भेंट चढ़ा दिया।'

इस प्रकार अशफ़ाकउल्ला के बलिदान की कथा सदा के लिए भारतीय नौजवानों के लिये आदर्श बन गई, वहाँ भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन की भी अमर गाथा बन गई।

24/4 बिशन सरूप कालोनी,
पानीपत–132103
दूरभाषः 0180–2643700

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 18-19/2/2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

# डी.ए.वी. कॉलेज फिरोज़पुर में हुआ विशेष वैदिक यज्ञ

डी.ए.वी. कॉलेज फॉर वूमेन, फिरोज़पुर कैंट में वैदिक यज्ञ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर हवन यज्ञ का आयोजन किया गया। श्री मनमोहन शास्त्री ने वैदिक मंत्रोच्चारण से यज्ञ सम्पन्न किया। शान्तिपाठ उपरान्त डॉ. वालिया ने अपने उद्बोधन में हिन्दु–मुस्लिम एकता के लिए अपने प्राण न्योछावर करने वाली आर्य जगत् की महान विभूति स्वामी श्रद्धा नन्द जी को श्रद्धा सुमन अर्पित किए। नारी शिक्षा, सामाजिक समानता व भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिए दिए गए स्वामी जी के योगदान को स्मरण करते हुए डॉ. वालिया ने उनके पदचिन्हों पर चलने का संदेश दिया। श्री मनमोहन शास्त्री ने स्वामी जी के जीवन पर विस्तार से प्रकाश डाला। इस हवन यज्ञ में कॉलेज का समस्त स्टाफ व स्थानीय समिति के सदस्य उपस्थित हुए। ऋषि लंगर के साथ यह समारोह सफलतापूर्ण सम्पन्न हुआ।

# 'कनिष्ठ वॉलीबाल प्रतियोगिता' में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल जसोला को द्वितीय स्थान प्राप्त

शिक्षा निदेशालय की ओर से 29 नवंबर, 2014 को 'कनिष्ठ वॉलीबाल प्रतियोगिता' का आयोजन किया गया। इस प्रतियोगिता का संचालन 'राजकीय उच्च माध्यमिक बाल विद्यालय, कालका जी नं.–2' ने किया।

इस प्रतियोगिता में विभिन्न स्कूलों से आई वॉलीबाल टीमों ने भाग लिया तथा अपना उत्कृष्ट प्रदर्शन किया। डी.

ए.वी. पब्लिक स्कूल, जसोला विहार की 'कनिष्ठ' वॉलीबाल टीम ने भी इस प्रतियोगिता में भाग लिया और विद्यालय के नाम को गौरवांवित करते हुए द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

विद्यालय के प्राचार्य डॉ. वी. के बड़थ्वाल जी ने विद्यार्थियों के प्रदर्शन की सराहना करते हुए उन्हें बधाइयाँ दी तथा भविष्य हेतु शुभकामनाएँ प्रदान की।

# वैदिक राष्ट्रीय ऋचा का मराठी भाषा में प्रकाशन

मकर संक्रान्त उत्सव पर श्री कृष्ण मंदिर पैठण रोड औरंगाबाद के महानुभाव आश्रम में आश्रम की अध्यक्षा पूज्य महन्त सुभद्रा अत्या के करकमलों द्वारा पू. संतोषमूनी कपाटे की उपस्थिति में प्रो. कृष्ण वल्लभ पालिवाल द्वारा लिखित वैदिक राष्ट्रीय ऋचा के हिन्दी भाष्य ग्रन्थ का मराठी भाषा में पं. दयाराम राजाराम बसैये (बंधु) ने अनुवाद किया है जो मंत्री आर्यसमाज तथा उपप्रधान महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा हैं इन्होंने अपनी बड़ी भाभीजी स्व. मथुराबाई जो शालिग्राम बसैये जी की सुविज्ञ पत्नी थीं प्रथम पुण्य स्मरण में यह ग्रन्थ समर्पित किया है। इस कार्यक्रम में ॲड. जोगेन्द्रसिंह चौहान (कोषाध्यक्ष आर्यसमाज) प्रधान जुगलकिशोरजी दायमा विश्व हिन्दू परिषद् विभाग सहमंत्री ॲड. काशिनाथ डापके अनुवादक दयाराम रा. बसैये, ओमप्रकाश राजाराम बसैये, जगन्नाथ राजाराम बसैये, सौ. रेखा एवं अभिजित काकड़े की उपस्थिति में प्रकाशन समारंभ संपन्न हुआ।

# ऋग्वेद मंडल 2 एवं 3 के मराठी भाषा में अनुवाद का विमोचन

आर्य समाज संभाजी नगर (औरंगाबाद–महाराष्ट्र) की ओर से आर्यसमाज के उपप्रधान सौ. सविता बलवंतराव जोशी जी द्वारा ऋग्वेद का मंडल 1 का प्रकाशन अन्तराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन दिल्ली में विमोचन हुआ था। अबकी बार हैदराबाद मुक्ति संग्राम के शहीद वेदप्रकाश के गाँव गुंजोटी तहसील उमरगा, जि. धाराशिव मे आर्यसमाज भवन के उद्घाटन

समय पर ऋग्वेद मण्डल 2 एवं 3 का प्रकाशन पू. स्वामी धर्मानंद जी महाराज आमसेना गुरुकुल उड़ीसा के करकमलों द्वारा किया गया। जिसमें महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा के कोषाध्यक्ष मा. उग्रसेनजी राठोर, सभा के प्रचारक पं. सुधाकर जी शास्त्री, उपप्रधान दयाराम राजाराम बसैये (बंधु), प्रधान पूज्य ब्रह्ममुनि जी वानप्रस्थी, मा. ॲड प्रकाश जी आर्य मंत्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, पू. स्वामी श्रद्धानंद जी संरक्षक सभा, पू. स्वामी व्रतानंदजी गुरुकुल आमसेना और सभी मान्यवरों की उपस्थित में कार्य संपन्न हुआ।

# कुबेर भंडार करनाली में सम्मान समारोह का आयोजन

टंकारा से मूलशंकर त्रिवेदी सायला आया, यहां शुद्ध चैतन्य बना चाणोद (करनाली) व्यास आश्रम, सिन्नोर में पढ़ता रहा, उसी की स्मृति में 13 जनवरी 2015 मंगलवार दिन के 12 बजे से, सर्वोच्च अंक से उत्तीर्ण छात्र–छात्रा, अन्य क्षेत्र संचालक, साधु संतो, का सम्मान तिलक अक्षत, पुष्पमाला सहित सचित्र किया गया।

भारत की आजादी के लिये ज्ञात–अक्षात, भूमिगत, देशी विदेशी प्रवासी स्वतंत्रता सेनानियों को स्मरण कर श्रद्धांजली दी गई साथ सत्य सनातन वैदिक धर्म पर शहीद होने वाले आर्य शहीदों को भी याद किया गया।

चांदोद के एक मात्र आर्य सन्यासी स्व. ब्रहमानंद सरस्वती स्वामी एवं गंगानाथ, त्रिकय मंदिर के भूमिगत स्वतंत्रता सेनानियों के बारे में भी आज की पीढ़ी को परिचित कराया गया। स्व. दयानंद जी वेदपाठी को स्मरण किया गया।

चांदोद–करनाली के साधु संत आश्रमों के लोक उपकारी कामों को जनता के समक्ष प्रस्तुत किया गया। यह आयोजन कुबेर भंडारी आश्रम के श्री चंद्रकांत जी पंडया एवं शक्ति पीठ की मौन साध्वी मीरायति के सौजन्य से संपन्न हुआ।

आयोजक रहे श्री हर्षदत्त भाटी डॉ. कमलेश कुमार पटेल और संयोजक भारत नेपाल परिक्रमावासी स्वामी प्रवासानंद जी सरस्वती।

इस आयोजन का प्रभाव स्थानीय चांदोद–करनाली–गंगनाथ वालों पर अच्छा रहा, आर्य समाज के लिये, जनता ने आर्थिक सहयोग भी किया। तदर्थ बहुत–बहुत धन्यवाद।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए एस.के शर्मा द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601 सम्पादक – पूनम सूरी